प्राक कथन

हमारा रहन ,सहन ,हमारा व्यवहार ,हमारे आचार विचार , हमारी बोलचाल ,हमारा खान पान ,हमारी आस्थाएं जैसे कई क्रिया कलापों में हम जाने या न जाने करते रहते है.जिन संस्कारों से प्रेरित होकर हम ये क्रियाएं करते है ,कुल मिला कर संस्कृति कहलाती है.सभी लोग सुख की हामी है.लेकिन सुख है क्या ?सुख मन की वह दशा है जिसमें इसे संतोष मिलता है. सुख क्या है ?सुख की प्राप्ती कैसे हो जायेंगे जैसे कई सवालों का जवाब ढूँढने का कार्य हमारे पूर्वजों ने किया था. जो हमारे पौराणिक ग्रंथों में समाहित है. भारत की धनी व प्राचीन संस्कृति की वजह से हमारा देश अन्य देशों के लिए प्रेरणा का स्रोत पौराणिक काल से ही रहा था.सिन्धु नदी घाटी से उद्भूत संस्कृति पर प्रकृती का प्रभाव पड़ना तो आम बात ही है. अपने बुद्धी के परे जो बातें हो रहे है ,उसको सिन्धु नदी तट वाले ' परमात्मा ' कह कर पुकारा.प्रकृती भी उस के लिए परमात्मा था.उनके सुख व समृद्धि का आधार था.

आज सबसे ज्यादा भरोसा जिस पर से उठने लगा है वह है आदमी। पहले का आदमी नीयत का जितना साफ-सुथरा, सहज और शुद्ध-बुद्ध होता था, उतना आज का आदमी नहीं। उस जमाने का आदमी मन-वचन और कर्म से एकदम स्पष्ट था, उसकी वाणी और आचरण में साम्यता थी और वो जो कहता था वही करता था,

जो करता था वही कहता था। इन दोनों ही प्रकार के कर्म व अभिव्यक्ति में न किसी प्रकार की कोई मिलावट थी, न कोई अंतर।

हृदय से लेकर वाणी और आँखों तक एक ही धारा का समत्व भरा प्रवाह ही इस बात का संकेत होता था कि जो शब्द उसके मुँह से उच्चारित हो रहे हैं वे मात्र कण्ठ की उपज नहीं हैं बल्कि हृदय के भीतर से आ रहे हैं। आदमी की वाणी से लेकर हाव-भाव और कर्त्तव्य कर्मो से स्पष्ट पता चल जाता था कि आदमी के मन में क्या है और वह क्या करने जा रहा है।

आदमी की इस साफगोई की वजह से पूरा समुदाय व क्षेत्र निश्चिन्त हुआ करता था। उस जमाने का आदमी अपनी पसंदगी या नापसंदगी को बेबाक ढंग से प्रकट करने का साहस व सामर्थ्य रखता था। उसे इस बात की परवाह नहीं थी कि उसके स्पष्ट व बेबाक विचारों से कोई खुश होगा या नाराज। वह अपनी ठोस, व्यवहारिक एवं सत्य राय देने में कभी नहीं हिचकता था।

कालान्तर में अपनी महान और अपार ऊर्जाओं को उत्तरोत्तर भुलाते रहे आदमी के लिए सिर्फ पैसा, मैं और मेरा घर-परिवार ही प्रधान होता चला गया जो आज आदमियों की पूरी-पूरी जमात में महारोग की तरह पसरता जा रहा है।

इस संकीर्ण उद्देश्य को ही वह अपने पूरे जीवन का अंतिम व निर्णायक लक्ष्य मान चुका है और पूरी जिन्दगी इसी के इर्द-गिर्द घूमने लगा है। उसे बाहर झाँकने तक की फुर्सत ही नहीं है, न वह ऐसा करना ही चाहता है।

कहीं से कुछ न कुछ पा जाने की मृगतृष्णा में फँसा आदमी कुछ न कुछ ढूँढता ही रहता है जिन्दगी भर। इसी सफर में अपने आपको भुलाकर कभी वह जंगलियों की तरह व्यवहार करने लगता है, कभी किसी का पालतु बनकर दासत्व को भी पीछे-छोड़ देता है। इन हालातों में उसके लिए वे सारे कर्म वरेण्य हैं जो और लोग उससे करवाना चाहते हैं।

दासत्व और पशुत्व की सारी सीमाओं को लाँघना अपनी फितरत में अपना चुका आदमी आज आदमी होने के ज्यादातर मानदण्डों को खो चुका है। इन सारी स्थितियों व उतार-चढ़ावों के बावजूद आज भी आदमीयत का मूल बीज नष्ट नहीं हुआ है लेकिन संकर बीजों का चलन कुछ ज्यादा ही हो चलने से जिस किस्म की फसलें और उनके जो प्रभाव आज हमारे सामने आ रहे हैं वह किसी से छिपा हुआ नहीं है।

आदमियों की पूरी दुनिया में बढ़ती जा रही बेतहाशा भीड़ के बीच अब आदमी अपनी संप्रभुता और स्वतंत्र अस्तित्व को खोता चला जा रहा है। अधूरेपन और अपने क्षुद्र स्वार्थों को पूर्णता देने के फेर में आदमी सह-अस्तित्व की अपनी तलाश को किश्तों-किश्तों में पूर्ण करने लगा है। यह तलाश उसके वैचारिक स्तर और ऐषणाओं के अनुरूप हमेशा बदलती ही रहती है।

इस निरंतर बदलाव ने आदमी की आदमीयत को साथ ही स्वामीभक्ति, वफादारी और विश्वास को गहरा आघात पहुँचाया है। आज आदमी अपना ही नहीं रहा। जीवन की पूरी यात्रा मंे आदमी अनगिनत पाले बदलता है, कितने ही राजमार्गो व जनमार्गो की खाक छानता है और जिन लोगों को श्रद्धा या स्वार्थ से अपना मानकर उनका आदमी कहलाता है, उनकी संख्या का तो आदमी के पास कोई हिसाब ही नहीं रहता।

स्थायित्व और शाश्वत सत्य से परे निरंतर परिभ्रमण और परिक्रमाओं को अपना चुके ये लोग मौके की नज़ाकत के अनुसार अपने आका, श्रद्धापात्रों और स्थलों को बदलते रहते हैं और तब तक ही एक जगह टिके रहते हैं जब तक अपनी झोली भरते रहने की संभावनाएं बनी रहती हैं। ये झोलियाँ पद-प्रतिष्ठा, दर्जा, जमीन-जायदाद से लेकर मुद्रा और उन सभी वस्तुओं के लिए फैलायी हुई हो सकती हैं जिन्हें पाने के लिए आदमी अपनी आदमीयत तक को गिरवी रख सकता है।

इधर-उधर हर कहीं भटकने वाले ये लोग दरअसल किसी के हो नहीं सकते। ये जिनके आदमी कहे जाते हैं, उनको भी इनके बारे में भ्रम नहीं होता, बल्कि वे भी इनकी असलियत से वाकिफ होते हैं और वे अच्छे महावत से लेकर ग्वाले तक की हर भूमिका का निर्वाह करने में माहिर होते हैं।

आखिर उन लोगों को भी चाहिये होते हैं- चँवर ढुलाने वाले, चम्पी करवाने वाले, प्रशस्ति गान करने वाले, जी हूजूरी में प्रवीण, वाह-वाह करने वाले और पालकियाँ

उठाने वाले कहार। ये उस्ताद लोग आदमियों की कमजोरी को भाँपने और उनके इस्तेमाल का जबर्दस्त हुनर रखते हैं।

पर यह कड़वा सच भी स्वीकारना होगा कि असल में ये किसी के आदमी नहीं हो सकते, तभी कल किसी और के आदमी थे, आज पाला बदल कर किसी और के कहे जाते हैं। मरते दम तक जाने कितने पाले और मैदान बदलते रहने वाले हैं यह तो भगवान ही जान सकता हैं

हमारा देश ऋषी मुनियों ,महर्षियों का देश रहा है,जहां बड़े -बड़े योगी व महात्मा पैदा हुए है ,जिन्होंने अपने ज्ञान से बड़े बड़े सांस्कृतिक ग्रंथों की रचना की है.उनमें जो शिक्षा वे अपने बाद आने वालों को दे रहे है वह प्रकृती से जुड़ कर जीने का सन्देश है. खुद उनहोंने उस कायदे के अनुसार जिया था और उसका गुण भी उन्हें मिला था.उकसी सहायता से सभ्य एवं सुखी समाज का निर्माण करते हुए उनहोंने सभ्य व अफ्रानीय देश का भी निर्माण किया.आज हमारे सामाज में नातिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है. इसका मोल कारण क्या है.यही सोच प्रकृती और भारतीय धर्मग्रंथ और खासकर सूफी साहित्य पर इसका प्रभाव नामक विषय के बारे में गोर से मनन करने की प्रेरणा मुझे दी.प्रहसें समय के शिक्षा रीति ही उनके सुखी जीवन का आधा रहा. यह तत्व मुझे समझ में आया.

सूफी धर्म का उद्भव अरब देशों में हुआ था.वहां से धीरे धीरे वे भारत में आये और यहाँ के प्रकृती पर आधृत शिक्षान रीतियों को अपनाकर उस शिक्षा को

अपनी रचनाओं में खूब अपनाया भी था. भारत में सूफी सम्प्रदाय के चिस्तिया ,सुहरावर्दी ,कादिरी ,नक्शाबंदी और शातारी संप्रदायों का प्रचलन हुआ था.उन लोगो ने अपनी रचनाओं के ज़रिये मानव समाज को विश्व मंगल की और ले जाने और उसकी संस्कृति को उत्तरोतर परिपुष्ट करने की कोशश की.

वर्तमान समय में हम प्रकृती से दूर होकर जीने की सज़ा भोग रहे है. हर कहीं अति वृष्टी या अनावृष्टी हो रहे है. प्रकुती बदलने लगे है.क्या यह सही प्रगती है ? यह देखना समय की मांग मांग बन गयी है की पौरानिकों के प्रकृती दर्शनं वर्तमान समय में कहाँ तक लागोऊ हो पायेंगे .इस अद्ध्य्यन में भारतीय ग्रंथों में और खास कर हिन्दी सूफी रचनाओं में प्रकृती का वर्णन कैसे हुआ है ,हमारे पूर्वज जो सन्देश सुनाना चाहते है...इसका खोज हो रहे है..

अद्ध्याय एक

भारतीय साहिय एवं संस्कृति में पर्यावरण

'पर्यावरण 'शब्द 'परि' उपसर्ग के साथ आवरण शब्द के संयोग से बना है.'परि का अर्थ है ,चारों और ,इर्द-गिर्द आदि .आवरणका अर्थ है आछादन. पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है-वातावरण,किसी व्यक्ति अथवा विषय की परिस्थिति .हमारे चारों और के आवरण,वातावरण एवं सजी –निर्जीव घटकों के सम्मिलित रूप का नाम ही पर्यावरण है. सजीव घटक में मनुष्य ,जीव ज्न्तु एव्म समस्त प्राणि जगत आता है. निर्जीव घटकों में क्षिति,जल,पावक,हवा,आदि शामिल है.

भारतीय संस्कृति में दो माताएं है, एक जन्म दात्री और दूसरी जन्म भूमि. पूर्वजों ने कहा भी है,

'जननी जन्म भूमिश्चा स्वर्गादपि गरीयसी' .

यह विचार क्यों उठा उनके मन में ?मनुष्य को प्रकृति को अपने अनुसार ढलने की क्षमता नहीं है, बल्कि उनको प्रकृति के अनुसा ढलना ही होगा. अपने जीवं पूर्ति के साधन मानव को प्रकृति से ही मिलते है.जो उनको संभालते है,खिलाते है,सहलाते है उनको माँ नहीं कहेंगे तो क्या कहेंगे ?भारत में कृषि संस्कृति और मुनि परम्परा का ज्यादा विकास होने का कारण भी यह ही है .

भारतीय संस्कृति में पूरे मानव जीवन को चार आश्रमों में बाँटा है-ब्रह्मचर्य ,गार्हस्थ्य,वानप्रस्थ और सन्यास .यहाँ भी अंतीं भाग है –वानप्रस्थ .अर्थात वन की और जाना .वन में प्रकृति के तालमेल में जीना .भारतीय ऋषि परम्परा का प्रारम्भ इन्हीं वन प्रदेशों से हुआ था. कर्षक संस्कृति के कारण गाय को गोमाता और आध्यात्मिक संस्कृति के कारण धरती को धरती माता कहकर पुकारा गया.

अथर्ववेद में कहा गया है-

"माता भूमि :पुत्रोहं पृथिव्याः "

अर्थात धरती मेरी माँ है और मैं उसका पुत्र हूँ .पृथ्वी को जड़ रूप में नहीं, जीवित वस्तु के रूप में देखनेवाले थे ,भारतीय आचार्य . सुबह सुबह पृथ्वी पर पैर रखने के पूर्व किये जानेवाले प्रार्थना इसका मिसाल है -

"समुद्र वसने देवी ,पर्वत सतनामण्डले

विष्णु पत्नी नमस्तुभ्यम ,पाद्सप्र्श्म क्षमस्वमे "

पृथ्वी को ऊर्ज और प्रकाश देनेवाला सूर्य है.अत : उस जीवन दाता से हमेशा जुड़कर रहने की प्रार्थना ऋग्वेद में ऐसा किया है-

"न सूर्यस्य सन्द्र्शे माँ युयोधा :

हमारा प्राण देवता वायु है. प्रश्नोपनिषद में वायु को लक्षित करके करनेवाला प्रार्थना देखिये -

" वायु वाई प्राणों भूत्वा शरीर माविशत"

पर्यावरण को हमारी संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान मिला है.'भगवतगीता 'में श्रीकृष्ण ने कहा है "प्रकृति के नाना रूपों में परमात्मा ही व्याप्त है. "पीपल.बरगद,आम,नीम,अशोक जैसे पेड़ों को लगाना पुण्य कर्म और काटना कुकर्म समझा जाता था.' मत्स्यपुराण 'में पर्यावरण संरक्ष्ण की ओर पौराणिक लोग कितना ध्यान देते थे, इसकी ओर सूचनाएँ है -

" दश कूप स्मावापी ,द्शावापी समोह्रिदा:

दशाह्रदा समोपुत्रो ,दशपुत्र समोद्रुम:'

अर्थात दस कुओं के बराबर एक बावड़ी है, दस बावडियो के बराबर एक तालाब है, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र है और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है."

प्रकृति और मानव के रिश्ते का सम्यक वर्णन भारतीय धर्म ग्रन्धों में दिया गया है. जल, वायु ,भूमि था वायुमंडल के संतुलन से ही जीना आसान बन जाएगा ,माननेवाले हमारे पूर्वज उसे धर्मन्धों में लिपि बद्ध किया है.

भारतीय आस्तिक थे. इसलिए ही उन्होंने अपने चारों ओर के सभी को वह परमात्मा के रूप में ही माना.

'"खं वायु मग्निं सलिलममहिंचाज्योतिसत्वानीदिशोद्रुमादीन

सरित्समुद्रांश्च हरे शरीरम

यात्किंचाभूतं प्रना मेद्नन्या:'"

पंचभूतों से बने शरीर में परमात्मा के अंश को प्रवेश करवाने पर ही उसमें सजीवता आ जायेंगे .कितना महान संकल्पना है, देखिये .प्रकृति से अपना जुड़ाव और मज़बूत बनाने केलिए उन्होंने समस्त प्रकृति को अपना गुरु माना ,पूजनीय माना.

" सूर्योग्निब्र्हामानोगावोवैष्णवःख्मरुज्ज्लम

भूरात्मासर्वभूतानिभद्रपूजापादानीमें "

तैत्तरीय उपनिषद के मन्त्र देखिये '

" आकाशाद्वायु /वायोरग्नि अग्नेराप

अद्भ्यपृथ्वी /पृथिव्याऔषधय

औधिभ्योंनाम/अन्न्त्पुरुषम " इससे यह स्पष्ट होताहै कि पंचभूतों में से किसी एक को होने वाला नुक्सान का असर अंत में मनुष्य को ही भोगना पडेगा

जल कैसे रूपांतरित होकर अंतरीक्ष में वापस आ जाते है,इसका सम्यक वर्णन ऋग्वेद में है -

" आदह्मस्व्ध्यमाणुपुग्र्भ्त्व्येरिरे /द्ध्यानानामयज्यिं "

चरकसंहितामेंइससेज़्यादासूक्ष्मवर्णनदर्शनीयहै

' खातपततसोमवाय्व्रकोस्प्रशतंकालानुवीत्भीं

शीतोष्णस्त्रिग्धरुज्नो धैय्र्थासंन्ममहीगुने "

भारतीय पानी को खुदा की हैसियत देने का कारण क्या है ? श्रुति में इसका व्यक्त उत्तर है

" आपोनाराइतिप्रोक्ता नामपूर्वमितिस्रुती

यमनतस्यटायस्माततेनानारायणस्मृता "

अर्थात 'जल ' को 'नार 'रूप से जाना जाता है.जल नर का आश्रय स्थान है. अतेव उसे नारायण कहा गयाहै .पानी इस्तमाल करनेवालों को ठेक तरह इस्तमाल करने की सलाह भी उसने दिया है.

" नदीगार्भेच गर्तेचवृक्षमूलेजलान्तिके

देवान्तिकेसहास्यभूमौपुरिर्षानोत्सृजेदबुध

' ऋग्वेद ' में समुद्र की रक्षा करने की बात कही गयी है .

"याभीसिन्ध्मवाथयादिश्स्र्तुर्वेथयाभिर्द्शस्यथा

मयोतेभूतोतिभिर्मयोभुव ;शिवाभिरासचाद्द्विषा "

भारतीय संस्कृति में जल की महत्व कितना है यह उप्र्योक्त उदाहरणों से सुव्यक्त होते है. जल को स्वच्छ्र और सुंदर बनाने की आवश्यकता पर वे बल देते थे. जल को अशुद्ध बनानेवालों को दंड देने तक वे तैयार थे .जल को मलिन करनेवालों को नरक ही मिलने की कल्पना उनहोंने किया है .

"मूत्र्श्लेत्मपुरिशानीयौरूत्सुष्टानीवारिणी

तेपात्यांतीच विन्मूतरेदुर्गंधेपूयापूरिते " (वायुपुराण)

सभी जल पीने के योग्य नहीं होंगे.वाग्भातानंद जीने ऐसे जल का चित्रं इस प्रकार कियाहै.

" नपिबेत्प्न्कशौवाल - तृणपर्णेविलास्तृम

सूर्य्येंदुपवानाद्रिश्तामाभिवृश्तंधनमगुरुम

फेनिल्मजन्तुम्त्प्तंदंतग्राह्यातिशैय्तात ; "

उस जल को न पीये जो कीचड़, सिवार ,तरीन तथा पत्तों के संयोग से मलिन हो तथा उनसे व्याप्त हो और जिस पर सूर्य एवं चन्दमा की किरणों का तथा शुद्ध वायु का स्पर्श न हो और अभी प्रथम बरसा हो .

सूर्य औ रचन्द्र के किरणों से पानी की शुद्धता बढ़ते है.

" दिवार्काकिरानैर्युष्टंनिशायामिन्दिराश्मिभी

अरुज्ञमनभिष्यन्तित्तुल्यमग्गानाम्बुना "

जल का निर्माण जल से ही होता है, उसका पालन भी जल ही करता है और जल ही उसका हरण करता है.

" जलमजलेनसृजतिजलमपातीजलनाया :

हरेज्ज्ल्मजलेनैवात कृष्णमभजसन्तं "

जल को सूर्य की किरणों खींचती है. वः जल बरसक्र हमारे लिए अन्न आदि उत्पन्न करके सुख देता है उसी प्रकार हम भी परस्पर सहायक और उपकारी रहना चाहिए.'अथर्ववेद' में ऐसा कहा गया है ,

" अपोदेवीरूपहयेयत्रगावःपियन्तिनः

सिन्धुभ्यकरत्वहवी :"

जल के सामान वायु भी हमारे जीवन के लिए आवश्यक चीज़ है.'चरकसंहिता ' के मन्त्र देखिये,

" वायुरायुर्बला वायार्क्युर्धाताशरीरिनिनाम

वायु र्विश्वामिदम सर्वम्भुर्वायुशकीरतते "

वायु को परमात्मा माननेवाले भारतीय मनीषी ,वायु को प्राण ,उड़ान,समान,व्यान व अपान भेद दिया .

" प्राणोदानासमानाख्याव्यानापानैस नञचधा

देहंतन्त्र्यतेसम्यक स्थानेश्व्याहश्वरन "

स्वस्थ पर्यावरण के लिए हवन बहुत लाभ दायक है .'यजुर्वेद ' में हमारे पूर्वजों ने कहा ,

" अग्नि युनिज्मशवसाध्र्तेनादिव्यासुपर्णव्यसाब्रिहन्तं

तेंवयमग्मेमाबहस्न्स्यविश्तुपस्वोरूहारणाअधिनाकमुत्त्मम "

अर्थात जो मानव अच्छे पदार्थो को आग में छोड कर पवन को शुद्ध बनाते है, उन्हें स्वर्ग मिलेंगे.

' चरकसंहिता ' में वायु दूषित रहने पर हमें क्या नुक्सान होंगे,इसकी सूचना है.

" विमार्गहायुकतावारागेस्वस्थानकर्मजै

शरीरम पीडयॅन्येतेप्राणानाशु हरहिंताच "

स्वस्थ जीवन बिताने के लिए वायु के बिना रुकावट से गमन करने की आवश्यकता की और सूचना करते हुए उन्होंने फिर लिखा ,रक्त में वायू दूषित होने पर शरीर में तीव्र वेदना,संताप,विवर्णता,कृशता ,भोजन में अरुचि आदि का होना स्वाभाविक बात है.

" रूस्तीवरा ससंतापा वैवर्ण्यक्रुश्तारुची

गात्रेचरुशिमभूक्त्स्यस्त्म्भस्च्स्रुग्गते /नीले "

चरकसंहिताअध्याय 8

वायू का प्रदूषण कैसे प्राकृतिक रूप से ठीक करवाएंगे , इसकी सूचना इस मन्त्र में दर्शनीय है,

"वायूनाहत्गंधाभू : सलिलात्वाया कल्पते

सलिलंतद्धुत्स्मज्योतिषाद्वायोप्काल्प्ते "

वायु पृथ्वी की गंध खींच लेती है ,जिससे वह जल के रूप में हो जाती है और जब वही वायु जल के रस को खींच लेते है, तब वह जल अपना कारण अग्नि बन जाता है.

वायु को स्वच्छ बनाने में पेड़ों का प्रमुख स्थान है.

" यथावृक्षो वनस्पति स्तयैवा पुरुषोअमृषा

तस्य लोमानी पर्णानित्वागास्योत्पातिकावही "

बृहदारण्यकोपनिषद

वनस्पति वृक्ष जैसा होता है, पुरुष भी वैसा ही होता है-यह बिलकुल सत्य है. वृक्ष के पत्ते होते है और उस पुरुष के शरीर में पत्तों के बजाय रोये होते है, उसके शरीर में जो त्वचा है, उसकी क्षमता इस वृक्ष के बाहरी भाग में छाल होती है.

"त्वचा एवास्य रुधिरंप्ररुयंदीत्वचउतपत

तस्मात्दात्रुण्णातपैतीरासोवृक्शादिवाहतात '

इस पुरुष की त्वचा से ही एक रक्त चूसा है और वृक्ष की भी त्वचा ही गोंड निकलता है.वृक्ष और पुरुष की इस समानता भारतीय पर्यावरण पर दिए महत्व का द्योतक है. आघात लगने पर वृक्ष के शरीर से इस रस निकलता है तो पुरुष के शरी र से रक्त. अपने तन को प्यार करने वाले कभी भी वृक्ष काटने में नहीं लगेंगे.

मत्स्य पुराण के ११८ वां अद्ध्याय में पुरूरवा विशेष प्रकार की जंगल पहुँचने की सूचना है.उस बीहड़ वन में पहून्च्नेवालों को आयु ,यश ,बल मिलेंगे.वनों की सूचना 'रामचरितमानस में भी दर्शनीय है.

“ रोम राजी अष्टादस भरा /अस्थि मेल सरिता नस जारा

उदार उदाठी उध्गो जातना/ जगमय प्रभु का वाहू कल्पना "

अर्थात अठारह प्रकार की असंख्य वनस्पतियाँ जिनकी रोमाव्वाली है,पर्वत अस्थियाँ है,नदियों नसों का जाल है,समुद्र पेट है,और नरक जिनकी नीचे की इन्द्रियाँ है.

भारतीय संस्कृति में वनों को कितना महत्व था इसकी सूचना हमें 'रामचरितमानस ' की पंक्तियों से सुविदित होंगे.

"पितृ वनदेव मात्रु वनदेवी /खग मृग चरण सरोरुह सेवी

अन्हून उचित न्रिपाही वन्वासु/ बय बिलोक हिये होई हसैसू "(दोहा ५५)

अर्थात वन के दवता तुम्हारे पिटा हो०न्गेऔर वन्देवियाँ माता होंगी.वहां के पशुपक्षीतुम्हारे चरण कमलों के सेवक होंगे

वनों एवं वृक्षों को हमारी संस्कृति में महत्वपूर्ण स्थान मिला है. ' भगवद्गीता ' में श्रीकृष्ण ने कहा है " प्रकृती के नाना रूपों में परमात्मा ही व्याप्त है.पीपल ,बरगद ,आम ,नीम अशोक जैसे पेड़ों को लगाना पुण्य कर्म और काटना पाप कर्म है."

महाकवी कालिदास जी की रचनाओं में वनों के महत्व को महत्वपूर्ण ढंग से चित्रित किया है.

"पातुम न प्रथमं व्यवस्यती जलं युशमास्वापितेशु या

नादत्ते प्रियामंद्नोपी भाव्तान्स्नोहेना या पल्लवन

आद्ध्येषा कुसुम्प्रसूतेसमय्ये यस्या भावत उत्सवः

सेया याती शकुन्तला पतिग्रुहम सर्वैरानुग्यातामः " (अभिज्ञान शाकुंतलम)

इसमें पहले पेड़ों को सींचने के बाद स्वयं पानी पीनेवाली ,फूलों से मालाएं न बनानेवाली ,पौथों में प्रथम फूल खिलने पर उत्सव मनानेवाली शकुन्तला की पाती गृह जाने की सूचना दिया गया है.

' मेघदूत ' में तो कालीदास जी पूरे पेड़ों को शिव जी भुजाओं के रूप में चित्रित किया है.अगर कोई पेड़ काटते है तो असल में वह पेड़ नहीं शिव जी की भुजाएंही काट रहे है. देखिये

"पश्यादुच्चाई भुजतारुवानाम मंदालेनाभिलेना

सान्धवं तेजः प्रतिनावाज्पापुसुपराकतम दधानः

न्नित्यारंभे गर पशुपतेरार्नागाजिनेच्चाम

शान्तेद्वेगिस्तानायानाम द्रिश्तिभाक्तिभ्र्वान्याह "(मेघदूत)

भारतीय आचार्य शाकाहारी थे.पशु-पक्षियों के खाद्य वास्तु बनाने की प्रथा को मानने वह तैयार नहीं थे.'यजुर्वेद' के त्रयोदाश्वाम अद्ध्याय में लिखा है,

"इमाम माँ ही सिद्धि पादम पशु सहरात्रा क्षो मेधाय चीयमान

मायुं पशुम मेधामगने जुशास्वा तेना चिन्पानास्त्र ,वो निषीद

मायुं ते शुगृच्छतु यं द्विश्मस्तम ते शुगृच्छतु "

अर्थात सबको उपकार करनेवाले जीवों को मारने का अधिकार मानव को नहींहै.उनकी रक्षा करके उनके सेवाओं को अन्य जंतुओं तक फैलाना चाहिए.मगर प्रकृति और मानव पर हमला करनेवाले पशुओं को मारना ही चाहिए.

उससे भी महत्वपूर्ण कल्पना 'नियमसार 'में दिया गया है,

"खामेमी सप्वे गीता,संवे जावा खमंतु में

मिति में सवा भूएसू वर मज्झं केनावी "

अर्थात मैं सब जीवों से क्षमा चाहता हूँ.सब जीव मुचे क्षमा करे,सब प्राणियों के प्रति मेर्व्व मैत्री है,किसी जीव से वैर भाव न रखें.

मौर्या साम्राज्य के समय में पशु –पक्षी कल्याण ,गो कल्याण,पेड़ों के कल्याण आदि के लिए एक एक अफसर नियुक्त हुए थे.पौराणिक भारत के कानूओनी किताब 'मनुस्मृति 'में हिंसा करनेवाले को दंड डंका प्राधान था.

"अनुमन्ता विशासीता निहन्ता कराया विक्रयी

संस्कृता चोपहर्ता च स्वादाकस्चेती घातका"

अर्थात हिंसा का अनुमोदन करनेवाले,प्राणियों के अंग भंग करनेवाले ,हिंसा करनेवाले,मांस बेचने,खरीदने,पकाने और खानेवाले ...ये सब हिंसक माने जाते है.ऐसे लोगों को इहलोक और परलोक में सुख नहीं मिलेंगे.

यहाँ एक बात स्पष्ट हो रहे है कि भारतीय संस्कृति प्राकृतिक अनुराग और प्राकृतिक संरक्षण कि चिरंतन धारा है.सूर्य,वायु ,जल आदि को दवता मानकर उनसे पाले पोसे मानव का जीवन सुखमय था.'मत्स्यपुराण ' की पंक्तियाँ देखिये -

" दश कूप समवापी ,दशावापी समोह्रुदा

दश ह्रदा समां पुत्रो, दश पुत्र समो द्रुमा "

अर्थात दस कुओं के बराबर एक बावडी है,दस बावडियों के बराबर एक पुत्र है और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष है.

हमारे पूर्वज प्रकृति को इश्वर माननेवाले थे.प्राकृतिकशक्तियों में देवी स्वरुप की अवधारणा यह इंगित करती है की हम इनकी रक्षा करें,इनसे अनुराग रखें तथा स्वस्त संतुलित जीवन यापन करेंधरती और सभी संसाधन नैवेध्य मानने वाले संस्कृति के नियामक अत्यन दूरदर्शी थे .उन्हें इस बात पर पर विश्वास था कि ये

संसाधन हमारी आवश्यकताओं की पूर्ती के लिए है , अपव्यय करने पर शीघ्र ही चुक जायेंगे . व्याहारिक स्तर पर प्रकृती और मानव के रिश्ते का इतना मनोरम वर्णन ,सभी जीव जालों को अपने घर का आदमी माननेवाले संस्कृति का चित्रण यहाँ हुआ है.

भारतीय संस्कृति के आधार ग्रन्ध वेद है.प्रथम वेद के रूप मे ऋग्वेद को स्थान दिया गया है. उसमें भी प्रकृति और मानव के अटूट रिश्ते पर प्रकाश डाला गया है.ऋग्वेद में मानव जीवन या प्राणी मात्र के लिए उपयोगी किसी भी चीज़ को देव कहा गया है.संसार सभी के नियंता सूर्यदेव की स्तुती देखिये,

" ॐ भूर्भुवस्वः तत सवितुर्वारेन्यम

भर्गो देवस्य धीमही धियो यो न प्रचोदयात "ऋग्वेद ३.६२.१०

अर्थात उस प्राणस्वरूप, दुखनाशक ,सुखस्वरूप ,श्रेष्ट ,तेजस्वी ,पापनाशक ,देवस्वरूप परमात्मा को हम अंतरात्मा में धारण करें .वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करें.

ऋग्वेद में प्रकृति और मानव के रिश्ते के बारे में सम्यक रूप से चित्रित किया है ,देखिये -

"ध्योवाई पिटा पृथिवी माता सोमो भ्रातादिती स्वसा

अदृष्टा विश्वदृश्तास्तिश्तातेलायता सु कम " 1\191\1

आकाश कोपिता,पृथ्वी कोमाता,चंद्रमा कोभैया और अखंड प्रकृती को बहन मानने की बात यहाँ कही गयी है.इस आशय का ही रूप कालिदासकी रचनाओं में भी दर्शनीय है.

उसी प्रकार अग्नी,इंद्र ,वरुण,मित्र, मरुत, सविता जैसे ३३ देवी देवताओं की स्तुती यजुर्वेद में दर्शनीय है.

यजुर्वेद में हर कहीं शांत भाव देखने की कल्पना किया गया है.हर कहीं व्याप्त शांत भाव को अपने दिलों में आकृष्ट करने की प्रार्थना ऋषी कर रहे है.

" द्यो शांती रंतारीक्षम शान्ति :प्रिथ्विई शान्तिराप : शान्ति रोश्ध्यांशान्ती

वानस्पत्य शांती विश्वे देवा :शांती ब्रह्मा शांती सर्वे

शान्ति शान्तेरेव शांती सा माँ शान्तिरिधि "

अर्थात द्युलोक ,अंतरीक्ष ,पृथ्वी,जल, औषधियां ,वनस्पतियाँ ,समस्त देवता ,ब्रह्म सब कुछ शांत हो ,शांत ही शांत हो और मेरी वह शांती निरंतर बनी रहे.

मानव को उध्द्यामी बनाने की प्रेरणा प्रकृती से ही मिलेंगे. ऐतरेय ब्रह्मण के मन्त्र देखिये -

"चरण वाई मधु विन्दाती चरण स्वादू मुदुम्बरम

सूर्यस्य पश्य श्रेमानाम यो न तन्द्रयते चरण "

अर्थात कार्यरत मनुष्य ही सुख प्राप्त करता है,वहीस्वादिष्ट फल प्राप्त करता है.सूर्या की श्रेष्टता को देखो,वह चलते हुए कभी क्षण भर के लिए भी आलस्य नहीं करता,अतः तुम भी चलते रहो,चलते रहो.यह मन्त्र सुननेवाले मानव में कर्त्यानिरत होने की भावना ज़रूर जाग उठेंगे.इसमें शक की कोई गूंजायिश ही नहीं.

उपनिषदों में भी प्रकृति और मानव के रिश्तों का वर्णन सम्यक हुआ है. छन्दोग्योपनिषद में जनश्रुति महाराजा को ब्रह्मज्ञान की सूचना हंसों स मिलते है.ऐतरेयोपनिषद में तो भिन्न लोकों के वर्णन है.भगवान् ने किस प्रकार सृष्टी की रचना की है ,इसका भी सूचना इसमें हुआ है. बृहदारण्यकोपनिषद में हमारे शरीर के प्रत्येक भाग ब्रह्मांड के किसी न किसी भाग के रूप में दर्शाया है.

" यद् पिंडे .तद ब्रह्मांडे "

अर्थात इस ब्रह्मांड में स्थूल व व्यापक रूप में जो भी चीज़ विद्ध्यमान हो ,वह हमारे मनुष्य शरीर में इद्ध्यमान है.मुनी आगे समझा रहे है,जगत के समस्त भूतों का सार पृथिवी है,और पृथ्वी का सार जल है.जल व पृथ्वी के रस से ही समस्त पौधों व औषधियों का निर्माण होता है.पौधों से फोल और फूलों से फल निकलते है.वही फल मनुष्य को शक्तिशाली बनाते है.

ब्रह्मांड की संरचना के बाद मनु ने उसमें जीनेवालों के लिए कुछ क़ानून बनाया . वही मनुस्मृति में दर्शनीय है. मनुस्मृति के षष्टम अद्ध्याय में वानप्रस्थ आश्रम के धर्म ,जंगली कांड मूल फलों को ग्रहण करने व त्यागने की विधियों के बारे में बताया गया है.

प्रकृति और मानव के रिश्ते का स्वरुप श्रीमद भागवद महापुराण में दर्शनीय है.भगवान् विष्णु का जन्म ,उस वक्त प्रकृति में हो रहे बदलाव , प्रकृति से ताल मेल स्थापित कर रहनेवाले आदि इसमें चित्रित किया है .प्रकृति से जन्म लेनेवाले मानव प्रकृति का हिस्सा बनकर जीवन यापन कर अंत में प्रकृति में विलीन हो जाते है.मानव को शिक्षा देनेवाले २४ गुरुओं के बारे में इसमें सूचनाएं है.उनमें चंदमा ,सूरज ,पंछी ,भौंरा ,आदि को भी गुरु मान रहे है.प्रकृति ही अच्चा गुरु है ,माननेवाले वैदिक समाज का ढीक पहचान इस रचना में देख सकते है.विष्णु के दस अवतार ,प्रकृति की और ध्यान देने की और ही इशारा कर रहे है.जबभी भूमी माता को ज्यादा वज़न महसूस होगी ,तब दुष्ट निग्रहार्थ भगवान् अवतार लेंगे.यह कल्पना इसलिए किया गया था की डर से है तो डर से मानव को सह जीवियों के प्रति प्यार होना चाहिए.

प्रकृति का विस्तृत अद्ध्ययन ब्रह्मांड पुराण में दर्शनीय है.पूर्व ,उत्तर और मद्ध्य भागों में विभाजित इस आद्ध्याय में कुल१५६ अद्ध्याय है .खगोल का ज्ञान ,सूर्या आदि ग्रहों ,तारों के बारे में इसमें लिखा गया है.

भारतीय संस्कृति के महा ग्रन्थ ' रामायण ' में भी प्रकृति और मानव का ताल मेल दर्शाया गया है.आगे जाना मुश्किल है सोच कर कोइ पीछे हटते है तो स्वयं प्रकृति ही उनको रास्ता दखाती है.सीता का जन्म और मृत्यु पृथ्वी के द्वारा होने की कल्पना इस रिश्ते को सुदृढ़ बनाने के लिए ही किया था.राज महल में पाले पोसे श्री राम भी वनवास करता है.यह घटना भी प्रकृति की और ज़्यादा ध्यान देने की बात प्रकाश डालने के लिए ही किया गया है.

‘ महाभारत’ भारतीय संस्कृति के महा ग्रन्थ है.इसमें कौरव वंश के राजा शांतनु और गंगा के मिलन गंगा नदी के तट पर होने के रूप में चित्रित किया है.वहीं से लेकर अंत तक महा भारत में प्रकृति भी एक सशक्त पात्र ही है.पांडवों की शिक्षा वन में हुई थी.इसलिए उनके व्यवहार में प्रकृती की शालीनता और भव्यता दर्शनीय है.वेदव्यास जी इस प्रकार की कल्पना के जरिये यह सन्देश hum तक पहुँचा रहे है की हमारा सुख चैन बहुत कुछ प्रकृति की कृपा पर निर्भर करता है.हमारा विकास परकृति से ताल मेल होकर ही होना चाहिए.प्राकृत से अलग होकर आगा जायेंगे तो इसका नतीजा कभी भी अच्छा नहीं रहेगा.आकाश में उडनेवाले पक्षी कितनी भी तीव्र गाती से और कितनी भी देर तक उड़े ,किन्तु ऊपर उसे आराम कनरे की सुविधा नहीं मिलेंगे .आराम करना है तो नीचे आना हां पडेगा.यह तत्व मानव कभी भूल जाते है.

जब तक मानव प्रकृती के साधनों को ,प्रकृति के अनुसार प्रयोग करते है ,तब तक मानव और प्रकृति का समन्वय बना पायेंगे.जब तक मानवप्रकृति के साथ नीतिवान रहते है,तब तक प्रगतिवान रहते है.मानव कर्मयोगी है और अन्य जीवी भोग योनी में आती है.जो भोगयोनियाँ है,उनके योग्यतानुसार मानव को लाभान्वित होना होना प्रकृती के अनुरूप है,:परतु उनके प्रती अनीती,शोषण आदी के वास्ते मानव प्रकृती के संतुलन को असंतुलित करके स्वयं को विनाश के मार्ग पर ले जाते हैपृथ्वी.(मानव स्वयं को पांच तत्वों .,जल,आकाश ,अग्नी और वायु)से नीती पूर्वक तरीके से व्यवहार करेंगे तो भौगोलिक ख़तरा रहेगा ही नहीं .

भारतीय ग्रंथों में हमारे शरीर के पांच तत्व प्रकृती के पांच तत्वों से प्रतिपूरित होने के रूप में चित्रित किया है.मानव औरप्रकृति का रिश्ता मान- बेटा जैसा है.प्रत्येकमानापने बेटे नन्हे पैरों से चलने पर खुश हो जाती है,और अपनी संतानों की रक्षा भी वह करेंगे,यह उम्मीद रखती है.धरती केसर्व श्रेष्ट पुत्र' मानव ' कभी यह भूल जाते है.तब प्रकृती का संतुलन बिगड़ने लगते है.प्रकृति की प्रत्येक रचना मानव के लिए है.उसका जानबूझ कर इस्तमाल करना ही चाहिए.

हमारे शरीर पांच तत्वों से निर्मित है.उसी पांच तत्वों को आधार बनाकर ही हमारे पूर्वज शिक्षा का ढांचा तैयार किया था.शिक्षा संपन्न होने के बाद गुरु शिष्यों को लेकर पहाड़ के ऊंचे शिखर पर जाकर उनसे पूछते थे कि पृथ्वी में स्थित अमुक वास्तु मके

बारे में ज्ञान है की नहीं ? अगर हाँ उत्तर मिलते तो शिष्य उतीर्ण होते थे ,और उत्तर नहीं है तो , अनुतीर्ण मानते थे.पृथ्वी पर जो दिखाई देता है उसका विस्तृत अद्ध्यायाँ करना ही शिक्षा का मुख्या उद्देश्य है.

पृथ्वी में रह कर हम जिन जिन शिक्षाएं प्राप्त करेंगे ,उनको विस्तृत बनाना अमुक व्यक्ती का कर्त्य है.बादल ओस रूपी कण से बाश्पीकृत करके आकाश के वास्ते सारी पृथ्वी को किस प्रकार देने है ,उसी प्रकार ज्ञान प्राप्त ज्ञान प्राप्त व्यक्ती , ज्ञान को बाँटना ही चाहिए . शिक्षा का लक्ष्य आकाश की भांती सर्वत्र विद्ध्यमान होना चाहिए ऐसे विचारवाले थे हमारे पूर्वज.

जल हमेशा प्रवाहमयी होना चाहिए .प्रवाह नहीं है तो जल सड़ने लगते है.शिक्षा भीप्रवाहमयी होना चाहिए.शिक्षा प्राप्ती के बाद ज्ञान को फैलाना चाहिए.भेद भावहमारे समाज में कायम रहने का कारण ज्ञान बंद करके रहना ही है.उस बंधन को तोड़ने पर ही हम परम तत्व तक पहुँच पायेंगे.

शरीर और प्रकृती के सम्बन्ध के बारे में विस्तृत वर्णन भारतीय आचार्यों ने किये है.जीभ से गुदतक माटी है,गुद से मूत्रेन्द्रिय तक जल है ,मूत्रेन्द्रिय से नाभी तक अग्नी है ,नाभी से ह्रदय तक वायु है ,और ह्रदय से कंठ तक आकाश है और आकाश के आगे मन दौड़ता है ,मन की सोच अनंत है .विज्ञान और वेद की भाषा अलग -अलग है,परन्तु विचार मूलतः एक है.वेद कहते हैसृष्टी के पूर्व सब कुछ

अंधकारमय हो जाता है .सृष्टी रचनाके आरंभ आरंभ्पर मिल जाते है.इससे कुछस्थान रिक्त हो जाते है.उसी को शून्य क्षेत्र की मान्यता दी गयीहै.परमाणु में गाती होने से वायु,अग्नी .आदि क्रिया- प्रतिक्रया द्वारा उत्पन्न होते है और फिर सृष्टी की रचना शुरू होते है.

पर्यावरण के किसी एक अंग का न होना या उनमें कमी होना कभी भी हुमारेलिये शुभदायी नहीं होंगे .यह जाननेवाले पूर्वजों ने प्रार्थना किया था -

" समुद्ररह सिन्धु रजो अन्तारीक्षमाज एक पातान्यितार्र्नव

अहिर्बुद्ध्य श्रुनाद्वाचान्सी में विश्वे देवारू उत सूर्यो मम "

अर्थात सागर ,महानदी ,पृथ्वी ,आकाश ,सूर्य विद्युत ,जलाशय एवं आकाश स्थित मेघ सभी हमें बढायें .पर्यावरण संरक्षण और पर्यावरण संतुलन का सन्देश यहाँ दर्शनीय है.

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण

भारतीय संस्कृति और पर्यावरण का गहरा रिश्ता है.छात्र मॉस की शुक्ल प्रतिपदा से हिंद्वों का नया साल बिक्रमी संवत शुरू होता है.उस दिन नवरात्र का त्यौहार मनाया जता है.गुडी पडवा ,उगादी जैसे कई नाम इस त्यौहार को है.उस दिन में ब्रहमा ने सृष्टि रचना प्रारंभ कर दी थी. नाग पंचमी के अवसर पर नागों की पूजा चलते है.शिवरात्री के दिन हम नंदिकेश्वर का भी पूजा करते है. शिव रात्री के दिन हम

नंदिकेश्वर की पूजा करते है.बेल वृक्ष की पत्तियां शिव लिंग पर चढाते है.यहाँ भी पर्यावरण के साथ हमारा जुड़ाव दर्शनीय है.

पर्यावरण से जुड़ कर मनानेवाले प्रमुख त्यौहार है दीपावली. ये पांच त्योहारों का समाहार है.पहला दिन स्वास्थय कामना का है.यह धनतेरस कहा जाता है.उस दिन धन्वन्तरी की पूजा होता है ,जो आयु और आरोग्य के देवता के रूप में माने जाते है.गदगी और पर्यावरण प्रदूषण जीवन को जटिल बनाता है.उन जटिलताओं से मुक्ति पाने के उद्देश्य में नरक चतुर्दशी मनाते है.दीपावली प्रकाश का दिन है ,जो अच्छाई का विजय का प्रतीक है.भारतीय कृषक संस्कृति से उपज त्योहजार है गोवर्धन पूजा. भैया दूज त्यौहार में भाई -बहिन के पवित्र प्रेम का सूचक है.पर्यावरण से संबंदित सभी बातें स्वास्थय ,स्वच्छता ,उजाला का दीपक ,धन धान्य की समृद्धि व् गो रक्षा तथा आपसी प्रेम भाव आदि दीपावली त्यौहार में दर्शनीय है.

भारतीय संस्कृति में जितनी भी देवतायें है ,उन सब के यातायात के माद्ध्यम के रूप में किसी न किसी पशु को ही माना है.जैसे गणपति को चूहा, सुब्रह्मन्य को मोर ,शिवजी को नंदिकेश ....यह भी मानव और प्रकृति के रिश्ते के बारे में सूचनाएं दे रहे है.किसी न किसी इश्वर के आदमी होने के कारण पौराणिक युग के लोग किसी भी जानवर को मारना अनुचित मानते थे .इसलिए ही उनके बीच अटूट रिश्ता भी था .मगर बाद में आये मानव अपने हित के ल्लिये सबको मारने लगे .इसका फल वह भोगने लगे है.

पर्यावरण सुरक्षा पर जितना ध्यान हमारे पूर्वजों नें दिया था ,उतना ध्यान हम नहीं दे रहे है .इसलिए ही हमें उचित मात्रा में उत्थान किसी भी क्षेते में नहीं हो रहे है.शकुन्तला की पेड़ों के प्रति रेम के बारे में हम चर्चा कर चुके है.उसी प्रकार महा कवी तुलसीदास जी ने भी 'रामचरित मानस ' में पेड़ों का वर्णन किया है.

प्राचीन काल में पर्यावरण के प्रति भारतीय दृष्टिकोण राष्ट्र कवी टगोर इस प्रकार व्यक्त करते है ," वन और प्राकृतिक जीवन मानव को एक निश्चित दिशा देते थे .मानव प्राकृतिक जीवन की वृद्धि के साथ निरंतर संपर्क में था .वह अपनी चेतना का विकास आसपास की भूमि से करता था .उसने विश्व की आत्मा के बीच के संबंध को महसूस किया. मानव और प्राकृत के बीच के इस तारतम्य ने पर्यावरण को आत्म अर्पित करने के शांतपूर्ण एवं बेहतर तरीकों को जन्म दिया है.मानो सामाजिक आत्मीयाकरण की अधिक उपयोगिकताथी , न कि जैविक आत्मीयाकरण की ."

संस्कृति ज़िंदगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छापा रहता है ,जिसमें हम जन्म लेते है.इसलिए जिस समाज में हम जन्म लिए है ,जिस समाज से मिल जुल क्र हम जी रहे है ,उसकी संस्कृति हमारी संस्कृति है.अथात संस्कृति जीवन की एक शैली है -एक दृष्टी है.प्रकृती व्यक्ती के बाहर और भीतर एक एक भौतिक पर्यावरण तैयार करते है तो संस्कृति व्यक्ती के भीतर और बाहर एक सान्स्क्रत्क पर्यावरण की रचना करतेहै.दोनों का सृजन एक

प्रकार का प्रयावरण है.सान्स्क्रत्क व्यक्ति पर्यावरण को आत्मीयता और अंतरंगता से देखेगा और उसका रस ग्रहण करेगा .भारतीय पर्यावरण को मानने वाले थे.

जो सूर्य पृथ्वी ,भुव और स्वर्ग तीनों लोकों को प्रकाशमान बनाता है ,वह मेरी बुद्धि को भी दिव्या और प्रखर करें .इस प्रार्थना प्रयावार्ण और भारतीयों के संबंध कितना दृढ़ है समझने के लिए काफी है.सूर्ये की तेज को बुध्दी के तेज से जोड़ने की कामना प्रकृति के तत्व को संस्कृति से जोड़ने की कामना ही है, इसमें तर्क की गुंजाईश आता ही नहीं .पांच तवों को स्मरण करके जी रहे संस्कृति के धुन ही वामन पुराण में सुन पायेंगे ,देखिये ," पृथ्वी अपनी सुगंध ,जल अपने बहाव ,अपनी तेज ,अंतरीक्ष अपनी शब्द ध्वनी और वायु अपने स्पर्श गुण के साथ हमारे प्रातः -काल को अपना आशीर्वाद दे दें ..."वायु पुराण १४.२६ .

भारतीय संस्कृति के बीज मन्त्र शुद्धि की भावना लिए हुए है.उसमें यज्ञ ,सूर्या ,अग्नी ,जल ,वायु ,अश्व्था ,तुलसी आदी कि उपासना है.मनुष्य इस सृष्टी की श्रेष्ट तम कृती है .वह यदी प्रकृती का पोषण करें तो प्रकृती भी अपनी खजाने से दोनों हाथों से मानव को संपत्ति देंगे .प्रक्रिई से माध्यम से बनाए गए मानव प्रकारांतर में संस्कृति की रक्षा करेंगे ,यही कामना से पौराणिक आचार्य ऐसी कल्पनाएँ किया है .

भारतीय मनीषियों को वन हमेशा शक्ती प्रदान किया है.भारत की प्रथम महा काव्य के रचना भी वन में ही हुआ था.वन ने उन्हें संबल दिया है ,सहारा भी ,शक्ती भी ,साधना, राग और विराग भी .पौराणिक युग में वन और मन दो नहीं एक

ही तत्व थे .वराह पुराण में कहा है , "जो व्यक्ती अपने जीवन में एक पीपल ,एक नीम और एक वड का पे लगाए ,दस फूलोंवाले वृक्शोनौर लताओं का रोपण करें ,अनार नारंगी और आम के दो -दो वृक्ष लगाए ,वह कभी नरक में नहीं जाएगा .."वराह पुराण (१७२. ३९).भारत के सभी धर्म प्रकृती से जुड़े हुए है .इसका मूल कारण यह है कि व्यक्ति श्रुद्धा से प्रकृती के साथ व्यवहार करें.

चरक संहिता में (अद्ध्याय ३ श्लोक २) मनुष्य के लिप्सा के कारण वनों को को जो विनाश होता है इसका वर्णन है.उसमें बताया गया है कि वनों का नाश अपने आप में एक भयानक ख़तरा है.ख़तरा का प्रभाव मनुष्यों कसे लेकर पूरे समाज तक व्याप्त है.मनुष्य अपनी मूर्खता से रोगी बनते है.मगर उदार प्रकृति वनस्पतियों के सहारे उसको शांती पहुंचाती है .

मनुष्य की चेतना के जीवंत दस्तावेज़ साहित्य उन्हें काल को देखने और परखने का दृष्टी देता है. कालिदास का 'मेघदूत 'प्रकृति प्रेम की एक प्रमुख कृती है.जयदेव के 'गीत गोविन्द ' में वसंत का रम्यक वर्णन हुआ है.काल्दिदास जी के सरस्वती वंदना ऐसे शुरू होते है ..

." या कुंदेंदु तुषारा हारा धवला

या शुभ्र वस्त्रावृता

या वीणा वारा डंडा मंडिता करा

या श्वेता पद्मासना

या ब्रह्मार्चिता शंकर प्रभितिभी

देवी सदा पूजिता

सा मान पातु सरस्वती भगवी निशेशा जाड्या पह"

इसमें से चंदमा ,बर्फ ,हंस आदी को हटाकर देखा जाए तो मन्त्र की शक्ती ही कम होती नज़र आयेंगे. प्रकृति शांती है ,समग्रता है और समन्वय है ....यही सन्देश भारतीय ग्रन्थों से गूँज उठ रहे है.प्रकृती के दरबार में सबको जीने का सामान हक मिल रहा है .स्वामी दयानंद जी के इन शब्दों में भारतीय और पर्यावरण का ठीक चित्र हमें प्राप्त होंगे -" नाना प्रकार के रत्न -धाटों से जड़े धरती ,विविध प्रकार के वत वृक्ष आदि के बीजों में अति सूक्ष्म रचना ,असंख्य हरित श्वेत पीट कृष्ण चित्रमय रूपून से युक्त पात्र ,पुष्प ,फल ,मूल निर्माण,क्षार ,कटु ,कषाय ,तिक्त ,अम्लादी विविध रस ,सुगंधी युक्त पात्र ,पुष्प ,फल ,अन्न ,कंद ,मूलादी की रचना अनेकानेक करोड़ों भूगोल ,सूर्या चंद्रादी लोक निर्माण ,धारण ,भ्रामन के नियमों की रचना आदि परमेश्वर के बिना कोई नहीं कर सकता .परमेश्वर कि इस सृष्टि का आनंद तभी है ,जब हम अपने आपको इसके योग्य सिद्ध करें."

भारतवर्ष को ऋषि-मुनियों की भूमि व देव भूमि कहा जाता है जिसके विशेष कारण है कि इस देव भूमि में लाखों हजारौं वर्षों में एक विशेष संस्कृति फलीफूली है और बढ़ी है। इसने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में एक सर्वोच्च स्थान प्राप्त

किया है। इन्हीं विशेष संस्कृति को हिन्दुत्व कहा जाता है। हिन्दू संस्कृति सभी लोगों को अपने मत और पंथ के अनुसार ईश्वर की उपासना करने को कहती है। इसलिए हिन्दुत्व का किसी से कोई झगड़ा नहीं है। हिन्दुत्व किसी विशेष पूजा-पाठ व अराधना का नाम नहीं है। एक नास्तिक व्यक्ति से भी हिन्दुत्व का कोई विरोध नहीं है। हिन्दुत्व जीवित धारणा है। यह जड़ बनने से साफ मना करता है। अहिंसात्मक साधनों द्वारा सत्य की खोज का दूसरा नाम हिन्दुत्व है। आज यह मृतप्राय-निष्क्रिय अथवा विकासशील नहीं दिख रही है तो इसका कारण यह है कि हम लगभग हजारो वर्षों की पराधीनता के कारण थक-हारकर बैठ गए है। ज्यों ही थकावट दूर हो जाएगी त्यों ही हिन्दुत्व संसार पर ऐसे तेज प्रखर के साथ छा जाएगा जैसे शायद पहले किसी ने कल्पना भी नहीं की होगी। निश्चित रूप से हिन्दुत्व सबसे अधिक सहिष्णु धारणा है वास्तव में हिन्दुत्व तो सभी धारणाओं का सार है हिन्दुत्व में सैद्धांतिक कटरता नहीं है। हिन्दुत्व न केवल सभी मनुष्यों की एकात्मता में विश्वास रखता है बलिक संसार के सभी जीवधारियों के एकात्मता में भी विश्वास करता है।

निस्वार्थ और पवित्र बनने का प्रयास ही धर्म मानती है। भारतीय दर्शन मानता है कि जीवन का वास्तविक उद्देश्य हमारे अंदर विराजित ईश्वर को प्रकट करना है। ध्यान, भक्ति, कर्मज्ञान, योग द्वारा भारी और भीतरी प्रकृति को वश में करना संभव है। ऐसा करने पर मनुष्य युक्त हो जाता है। यह स्वतंत्रता ही जीवन का सार है। हिन्दू धर्म ही भारत के ज्ञान को उजागर कर सकता है, उसकी सांस्कृतिक धरोहर को संभालकर रख सकता है। यदि वह अध्यातिमक उन्नती को बढ़ावा देने में

असफल हुआ तो भारत ही नहीं सारे विश्व को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ेगी। मानव जाति को विनाश से बचाने के लिए वह संसार को विकास की ओर अग्रसर करने के लिए यह अति आवश्यक है कि भारतीय ऋषि संस्कृति भारत में फिर से स्थापित की जाये जो फिर सारी दुनिया में प्रचलित होगी। यह उपनिषद और वेदांत पर आधारित संस्कृति ही अंर्तर्राष्ट्रीय धर्म की नींव बन सकती है।

इस प्रकार देख सकेंगे की सभी भारतीय धर्म ग्रंथों में प्रकृती और मानव के रिश्ते पर ज्यादा बल दिया है.अरब से आये सूफी संत भी इस और आकृष्ट हुए. सूफियों ने प्रेममार्ग से भारतीयों के दिलों को जीता.उनको सफलता मिलने का मूल कारण उनकी रचनाएं ही है.अगले अद्ध्याय में प्रमुख सूफी रचनाओं पर प्रकाश डाल रहे है.

@@@@@@@@@@@@

अद्ध्याय २

हिंदी सूफी साहित्य की पृष्ठ भूमी

हिंदी साहित्य के स्वर्ण युग है भक्ति काल.भक्ति काल के साहित्य रूपी वनस्थली में भक्ति के विभिन्न रूपों से उत्पाद साहित्य रत्नों का अमूल्य खजाना मिलेंगे.बहकती के हर एक विधा का अपना साहित्य भी है.साहित्य द्वारा भक्ति का और भक्ति द्वारा साहित्य का उद्धार करका दोनों एक दुसरे के पूरक बन गया है.हिंदी साहित्य के भक्ति काल के निर्गुण शाका के प्रेमाश्रयी सूफी रचनाओं के पृष्ट भूमी के बारे में यहाँ चर्चा हो रहे है.

हिंदी साहित्य के भक्तिकाल में सबसे पहले चर्चा करने वाले साहित्यिक विधा है निर्गुण काव्य .लगता हो रहे वैदेशिक आक्रमणों के कारण भारतीयों के मन में धार्मिक भावनाएं जाग उठने लगे .पंद्रहवीं सदी से इसका सुगतित्त रूप साहित्य में भी आने लगे.बाह्य आडम्बर से ज़्यादा आंतरिक बल पर ध्यान देनेवाले निर्गुण साहित्यकार समाज को हर तरह के कप्ताताओं से बचाना चाहा.उसी शाखा के समानांतर ही सूफी काव्य धारा का प्रवाह हुआ.मानवीय प्रेम और हमदर्दी की भावना से मानव को एक दुसरे के निकट लाने का अथक कोशिश उनहोंने किया.उन केलिय मनुष्य सबसे पहले मनुष्य है,उसके बाद कुछ और.प्रेमाश्रयी शाखा में मुख्यतः दो प्रकार की रचनाएं मिलेंगे -

१. आध्यात्मिक प्रेम परक काव्य

२. विशुद्ध लौकिक प्रेम काव्य

कूटबन कृत ' मृगावती ',मंझन कृत ' मधु मालती ' ,जायसी कृत ' पद्मावत ' आदि आद्ध्यात्मिक प्रेम परक सूफी रचनाएं है.सूफी प्रेम साधना में साधक ब्रह्मा को प्रियतमा के रूप में स्वीकार कर उस पर अधिकार जमा लेता है.सूफियों के लिए भावना ही प्रधान है ,साधक केवल प्रेम की ही उपासना करता है. सूफी धर्म के बारे में विचार करने के पहले इस्लाम धर्म का परिचय पान अत्यन आवश्यक है.

इस्लाम का इतिहास

आमतौर पर यह समझा जाता है कि इस्लाम 1400 वर्ष पुराना धर्म है, और इसके 'प्रवर्तक' पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) हैं। लेकिन वास्तव में इस्लाम 1400 वर्षों से काफ़ी पुराना धर्म है; उतना ही पुराना जितना धर्ती पर स्वयं मानवजाति का इतिहास और हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) इसके प्रवर्तक (Founder) नहीं, बल्कि इसके आह्वाहक हैं। आपका काम उसी चिरकालीन (सनातन) धर्म की ओर, जो सत्यधर्म के रूप में आदिकाल से 'एक' ही रहा है, लोगों को बुलाने, आमंत्रित करने और स्वीकार करने के आह्वान का था। आपका मिशन, इसी मौलिक मानव धर्म को इसकी पूर्णता के साथ स्थापित कर देना था ताकि मानवता के समक्ष इसका व्यावहारिक रूप साक्षात् रूप में आ जाए।
इस्लाम का इतिहास जानने का अस्ल माध्यम स्वयं इस्लाम का मूल ग्रंथ 'क़ुरआन' है। और

क़ुरआन, इस्लाम का आरंभ प्रथम मनुष्य 'आदम' से होने का ज़िक्र करता है। इस्लाम धर्म के अनुयायियों के लिए क़ुरआन ने 'मुस्लिम' शब्द का प्रयोग हज़रत इबराहीम (अलैहि॰) के लिए किया है जो लगभग 4000 वर्ष पूर्व एक महान पैग़म्बर (सन्देष्टा) हुए थे। हज़रत आदम (अलैहि॰) से शुरू होकर हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) तक हज़ारों वर्षों पर फैले हुए इस्लामी इतिहास में असंख्य ईशसंदेष्टा ईश्वर के संदेश के साथ, ईश्वर द्वारा विभिन्न युगों और विभिन्न क़ौमों में नियुक्त किए जाते रहे। उनमें से 26 के नाम क़ुरआन में आए हैं और बाक़ी के नामों का वर्णन नहीं किया गया है। इस अतिदीर्घ श्रृंखला में हर ईशसंदेष्टा ने जिस सत्यधर्म का आह्वान दिया वह 'इस्लाम' ही था; भले ही उसके नाम विभिन्न भाषाओं में विभिन्न रहे हों। बोलियों और भाषाओं के विकास का इतिहास चूंकि क़ुरआन ने बयान नहीं किया है इसलिए 'इस्लाम' के नाम विभिन्न युगों में क्या-क्या थे, यह ज्ञात नहीं है। इस्लामी इतिहास के आदिकालीन होने की वास्तविकता समझने के लिए स्वयं 'इस्लाम' को समझ लेना आवश्यक है। इस्लाम क्या है, यह कुछ शैलियों में क़ुरआन के माध्यम से हमारे सामने आता है, जैसे:

इस्लाम, अवधारणा के स्तर पर 'विशुद्ध एकेश्वरवाद' का नाम है। यहां 'विशुद्ध' से अभिप्राय है: ईश्वर के व्यक्तित्व, उसकी सत्ता व प्रभुत्व, उसके अधिकारों (जैसे उपास्य व पूज्य होने के अधिकार आदि) में किसी अन्य का साझी न होना। विश्व का...बल्कि पूरे ब्रह्माण्ड और अपार सृष्टि का यह महत्वपूर्ण व महानतम सत्य मानवजाति की उत्पत्ति से लेकर उसके हज़ारों वर्षों के इतिहास के दौरान अपरिवर्तनीय, स्थायी और शाश्वत रहा है।

इस्लाम शब्द का अर्थ 'शान्ति व सुरक्षा' और 'समर्पण' है। इस प्रकार इस्लामी परिभाषा

में इस्लाम नाम है, ईश्वर के समक्ष, मनुष्यों का पूर्ण आत्मसमर्पण; और इस आत्मसमर्पण के द्वारा व्यक्ति, समाज तथा मानवजाति के द्वारा 'शान्ति व सुरक्षा' की उपलब्धि का। यह अवस्था आरंभ काल से तथा मानवता के इतिहास हज़ारों वर्ष लंबे सफ़र तक, हमेशा मनुष्य की मूलभूत आवश्यकता रही है।

इस्लाम की वास्तविकता, एकेश्वरवाद की हक़ीक़त, इन्सानों से एकेश्वरवाद के तक़ाज़े, मनुष्य और ईश्वर के बीच अपेक्षित संबंध, इस जीवन के पश्चात (मरणोपरांत) जीवन की वास्तविकता आदि जानना एक शान्तिमय, सफल तथा समस्याओं, विडम्बनाओं व त्रासदियों से रहित जीवन बिताने के लिए हर युग में अनिवार्य रहा है; अतः ईश्वर ने हर युग में अपने सन्देष्टा (ईशदूत, नबी, रसूल, पैग़म्बर) नियुक्त करने (और उनमें से कुछ पर अपना 'ईशग्रंथ' अवतरित करने) का प्रावधान किया है। इस प्रक्रम का इतिहास, मानवजाति के पूरे इतिहास पर फैला हुआ है।

4. शब्द 'धर्म' को, इस्लाम के लिए क़ुरआन ने शब्द 'दीन' से अभिव्यक्त किया है। क़ुरआन में कुछ ईशसन्देष्टाओं के हवाले से कहा गया है (42:13) कि ईश्वर ने उन्हें आदेश दिया कि वे 'दीन' को स्थापित (क़ायम) करें और इसमें भेद पैदा न करें, इसे (अनेकानेक धर्मों के रूप में) टुकड़े-टुकड़े न करें।

इससे सिद्ध हुआ कि इस्लाम 'दीन' हमेशा से ही रहा है। उपरोक्त संदेष्टाओं में हज़रत नूह (Noah) का उल्लेख भी हुआ है और हज़रत नूह (अलैहि॰) मानवजाति के इतिहास के आरंभिक काल के ईशसन्देष्टा हैं। क़ुरआन की उपरोक्त आयत (42:13) से यह तथ्य सामने आता है कि अस्ल 'दीन' (इस्लाम) में भेद, अन्तर, विभाजन, फ़र्क़ आदि करना सत्य-विरोधी है-जैसा कि बाद के ज़मानों में ईशसन्देष्टाओं का आह्वान व शिक्षाएं भुलाकर, या उनमें फेरबदल, कमी-बेशी,

परिवर्तन-संशोधन करके इन्सानों ने अनेक विचारधाराओं व मान्यताओं के अन्तर्गत 'बहुत से धर्म' बना लिए।

मानव प्रकृति प्रथम दिवस से आज तक एक ही रही है। उसकी मूल प्रवृत्तियों में तथा उसकी मौलिक आध्यात्मिक, नैतिक, भौतिक आवश्यकताओं में कोई भी परिवर्तन नहीं आया है। अतः मानव का मूल धर्म भी मानवजाति के पूरे इतिहास में उसकी प्रकृति व प्रवृत्ति के ठीक अनुकूल ही होना चाहिए। इस्लाम इस कसौटी पर पूरा और खरा उतरता है। इसकी मूल धारणाएं, शिक्षाएं, आदेश, नियम...सबके सब मनुष्य की प्रवृत्ति व प्रकृति के अनुकूल है अतः यही मानवजाति का आदिकालीन तथा शाश्वत धर्म है। क़ुरआन ने कहीं भी हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) को 'इस्लाम धर्म का प्रवर्तक' नहीं कहा है। क़ुरआन में हज़रत मुहम्मद (सल्ल॰) का परिचय नबी (ईश्वरीय ज्ञान की ख़बर देने वाला), रसूल (मानवजाति की ओर भेजा गया), रहमतुल्-लिल-आलमीन (सारे संसारों के लिए रहमत व साक्षात् अनुकंपा, दया), हादी (सत्यपथ-प्रदर्शक) आदि शब्दों से कराया है। स्वयं पैग़म्बर मुहम्मद (सल्ल॰) ने इस्लाम धर्म के 'प्रवर्तक' होने का न दावा किया, न इस रूप में अपना परिचय कराया। आप (सल्ल॰) के एक कथन के अनुसार 'इस्लाम के भव्य भवन में एक ईंट की कमी रह गई थी, मेरे (ईशदूतत्व) द्वारा वह कमी पूरी हो गई और इस्लाम अपने अन्तिम रूप में सम्पूर्ण हो गया' (आपके कथन का भावार्थ।) इससे सिद्ध हुआ कि आप (सल्ल॰) इस्लाम धर्म के प्रवर्तक नहीं हैं। (इसका प्रवर्तक स्वयं अल्लाह है, न कि कोई भी पैग़म्बर, रसूल, नबी आदि)। और आप (सल्ल॰) ने उसी इस्लाम का आह्वान किया जिसका, इतिहास के हर चरण में दूसरे रसूलों ने किया था। इस प्रकार इस्लाम का इतिहास उतना ही

प्राचीन है जितना मानवजाति । यह ग़लतफ़हमी फैलने और फैलाने में, कि इस्लाम धर्म की उम्र कुल 1400 वर्ष है दो-ढाई सौ वर्ष पहले लगभग पूरी दुनिया पर छा जाने वाले यूरोपीय (विशेषतः ब्रिटिश) साम्राज्य की बड़ी भूमिका है। ये साम्राज्यी, जिस ईश-सन्देष्टा (पैग़म्बर) को मानते थे ख़ुद उसे ही अपने धर्म का प्रवर्तक बना दिया और उस पैग़म्बर के अस्ल ईश्वरीय धर्म को बिगाड़ कर, एक नया धर्म उसी पैग़म्बर के नाम पर बना दिया। (ऐसा इसलिए किया कि पैग़म्बर के आह्वाहित अस्ल ईश्वरीय धर्म के नियमों, आदेशों, नैतिक शिक्षाओं और हलाल-हराम के क़ानूनों की पकड़ से स्वतंत्र हो जाना चाहते थे, अतः वे ऐसे ही हो भी गए।) यही दशा इस्लाम की भी हो जाए, इसके लिए उन्होंने इस्लाम को 'मुहम्मडन-इज़्म (Muhammadanism)' का और मुस्लिमों को 'मुहम्मडन्स (Muhammadans)' का नाम दिया जिससे यह मान्यता बन जाए कि मुहम्मद 'इस्लाम के प्रवर्तक ' थे और इस प्रकार इस्लाम का इतिहास केवल 1400 वर्ष पुराना है। न क़ुरआन में, न हदीसों (पैग़म्बर मुहम्मद सल्ल॰ के कथनों) में, न इस्लामी इतिहास-साहित्य में, न अन्य इस्लामी साहित्य में...कहीं भी इस्लाम के लिए 'मुहम्मडन-इज़्म' शब्द और इस्लाम के अनुयायियों के लिए 'मुहम्मडन' शब्द प्रयुक्त हुआ है, लेकिन साम्राज्यिों की सत्ता-शक्ति, शैक्षणिक तंत्र और मिशनरी-तंत्र के विशाल व व्यापक उपकरण द्वारा, उपरोक्त मिथ्या धारणा प्रचलित कर दी गई। भारत के बाशिन्दों में इस दुष्प्रचार का कुछ प्रभाव भी पड़ा, और वे भी इस्लाम को 'मुहम्मडन-इज़्म' मान बैठे। ऐसा मानने में इस तथ्य का भी अपना योगदान रहा है कि यहां पहले से ही सिद्धार्थ गौतम बुद्ध जी, ''बौद्ध धर्म'' के; और महावीर जैन जी ''जैन धर्म'' के 'प्रवर्तक' के रूप में सर्वपरिचित थे। इन 'धर्मों' (वास्तव में 'मतों') का इतिहास लगभग पौने तीन हज़ार वर्ष

पुराना है। इसी परिदृश्य में भारतवासियों में से कुछ ने पाश्चात्य साम्राज्यों की बातों (मुहम्मडन-इज़्म, और इस्लाम का इतिहास मात्र 1400 वर्ष की ग़लत अवधारणा) पर विश्वास कर लिया।

सूफी शब्द का मूल

मुस्लिम रहस्यवाद सूफी मत कि नाम से जाना जाता है.कुछ विद्वानों ने सूफी के लिए सफ़ेद उन का कपड़ा पहननेवाला फ़कीर का नाम दिया है.और कुछ लोग निर्णय के दिन पवित्र एवं इश्वर भक्त होने के कारण अन्य व्यक्तियों से पृथक पंक्ती में खड़े किये जानेवालों को सूफी संज्ञा दिया .आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने जायसी ग्रंथावली की भूमिका में लिखा है , " आरम्भ में सूफी एक प्रकार के फ़कीर या दरवेश थे ,जो खुदा की राह पर अपना जीवन ले चलते थे .दीनता और नम्रता के साथ बड़ी फटी हालत में दिन बिताते थे.ऊन के कम्बल लपेटे रहते थे .भूख ,प्यास सहते थे और इश्वर के प्रेम में लीं रहते थे ."

सूफी मत का आविर्भाव

इस्लाम के रहस्यावादी साधक को सूफी और उनके दर्शन को 'तसवुफ्फ़ 'नाम से जाने जाते है.इस्लाम के जन्म के पूर्व के काल को जाहिल्यत काल कहा जता है.जाहिलियत काल के अरब लोग रमणी ,शराब और जुआ खेल कर जीवन बिता रहे

थे.ऐसी हालात में हसरत मुहाद साहब का जन्म हुआ और उनहोंने अपने क्षमताओं के ज़रिये समाज का पुनर निर्माण का कार्य करने लगा.इश्वर में विश्वास ,प्रार्थना ,ज़कात ,उपवास और मक्का की यात्रा इन पांच स्तंभों में इस्लान धर्म रूपी महल खडा करके उन्होंने अपना संदेश 'कुरआन ' में लिपि बद्ध किया सूफियों केलिए रहस्यावाद के बीज भी उसी धर्म ग्रन्थ में बोये गए .इस प्रकार सूफी मत बीजारोपण हुआ

भारत और अरब देशों का पुराने ज़माने से ही व्यापारिक संबंध था .इस प्रकार इस्लाम धर्म से भारत का परिचय दृढ हो गया .अरब देशों में जड़ें हिलने के कारण सूफी साधक धीरे धीरे अन्य देशों की और आने लगे.इस्लाम धर्म के अनुयायिओं का विरोध ही उनके जड़ें हिलने का मुख्या कारण रहा .भारत में आये मुस्लिम विजेताओं के साथ सूफी साधक भी भारत में पहुँच गए.अबुल फज़ल मुहम्मद के शागिर्द शेख अली अल हज्विओरी भारत में आये पहले सूफी साधक थे..बारहवीं और तेरहवीं सदियों में कई सूफी साधक भारत में आये .ख्वाजा मुईनुद्धीन चिस्ती जैसे कई सूफी साधक भारत के कई कोनों में आये और अपने धर्म का सन्देश फैलाए .

भारत में आये सूफी साधक , मूल सूफी सिद्धांतों को थोड़ा बदलकर अपने -अपने मत के अनुसार मठों की स्थापना कर अपने पन्थ की और लोगों को आकृष्ट किया .इस प्रकार भारत में निम्न लिखित सूफी सम्प्रदायों का प्रचलन होने लगा.

चिश्ती संप्रदाय -----ख्वाजा मुइनुद्दीन चिस्ती

सुहरावर्दी संप्रदाय ---- शिहाबुद्दीन सुहार्वर्दी

कादिरी संप्रदाय ---- अब्दुल कादर जिलानी

नक्शाबंदी संप्रदाय ----- ख्वाजा उबैयुल्ला

शातारी संप्रदाय ------- शेख अब्दुल्ला शातारी .इस के अलावा समय बीतने के साथ -साथ कई उप स्न्प्रादयों का भी आविर्भाव हुआ मोटे तौर पर उनका विभाजन दो रूपं में है

१.इस्लाम के आचार विचार पर आस्था रखने वाले ' बा -शरा 'संप्रदाय और इस्लाम के आचार -विचार पर विश्वास न रखने वाले 'बे शरा ' विभाग .सामजिक समानता केलिए सभी सूफी साधक कर्म निरत थे.सूफ्यों के अनुसार आत्मा और परमात्मा में कोई अंतर नहीं है .आत्मा परमात्मा के सामने अपने आप को एक भक्त के रूप में प्रस्तुत करती है और भक्त प्रेम के द्वारा उस हक तक पहुँचने की कोशश में लीं रहता है.हक तक पहुँचने के लिए साधकों को शरीयत ,तरीकत ,हकीकत ,मारिफत नामक चार अवस्थाओं से गुज़रना पड़ता है.मारिफत में पहून्च्नेवाले साधक को ' बका '(अमरता प्राप्ती के लिए फना हो जाता है.

सूफी सम्प्रद्द्य का संबंध शामी विचारधारा से प्रभावित इस्लाम धर्म से है.शामी जातियों से प्रेम और विरह का स्वरुप सूफियों ने अपनाया .सूफियों में पाई जानेवाली इल्हाम की कल्पना शामी संस्कारों से मिली हुई चीज़ है.इसके अलावा नव

अफलातूनी दर्शन ,आर्य दर्शन , कुरआन आदी का प्रभाव भी दर्शनीय होंगे.सूफ के वस्त्र धारण करने वाले सूफियों की सादगी से ही लोग उनके और आकर्षित हुए. भारत में आने के पहले ही इस्लाम और सूफियों के बीच का अलगाव कम हो गए थे.अधिकांस सूफी साधक सूफी विचारधारा के अनुसार अपना जीवन बिताने लगे थे.सूफी कविओयों ने प्रेमाख्यानों के आरंभ में अल्लाह तथा मुहामेद को प्रणाम करने की विधा इसका उदाहरण है.ओमर खैय्याम ,रूमी ,सनाई जैसे ईरानी सूफी कवियों ने अपनी रचनाओं के ज़रिये सूफी धर्म के आशयों का प्रचार करने लगे.इसका अनुकरण सोदूर भारत में भी होने लगे.सोफ्फी मत के उपदेशात्मक बातों को काव्य उप में बदलकर ,और आकर्षक बनाकर सूफी साधकों ने सूफी धर्म के जड़ों को मज़बूत बनाया

प्रमुख चार संप्रदायों के अलावा उबैसी ,मदारी ,कल्म्दारिया ,माल्माती कालातर ,जैसे कई उपशाखाएँ भी हुए थे.सूफी संतों को प्रारम्भिक युग में भय और दंड का सामना करना पड़ा था.अगले पड़ाव में वे नवीन तत्वों को अपनाकर अपनी उदारता दिखाने लगे.अगले चरण में सूफी धर्म इस्लाम धर्म का ही हिसा बन गया .ऐसे उदार चेता सूफी साधक ही भारत में आये थे.हिंदी के अधिकाँश सूफी कवियों का संबंध चिस्तिया से है..

सूफी साधक इस सृष्टी में परम सत्ता को प्रकट देखता है.सूफी साधक की चार अवस्थाएं मानते है.

१) शरीअत अर्थात कर्म काण्ड

२)तरीकत अर्थात उपासना काण्ड

३)हकीकत अर्थात ज्ञान काण्ड

४)मारिफत अर्थात परम सत्ता में विलीन होना .

जायासी ने ' अखरावट 'में इन चारों अवस्थाओं की जिक्र किया है.शेख रहीम के प्रेम रस में भी इसका सम्यक वर्णन हुआ है.हकीकत साधक की परम अनुभूती है.शरीअत ,तरीकत के सम्यक पालन से प्राप्त मारिफत से ही हकीकत की प्राप्ति होगी.

सूफी साधना में गुरु को प्रमुख स्थान है.दुनिया के सभी प्रतिकूल बातों को अनुकूल बनाने वाले गुरु के बारे में सभी सूफी कवियों ने गाया . सूफी काव्यों में गुरु को प्रामुख्या मिलने के कारण भारतीय प्रभाव ही है.श्वेताश्वेटर और मान्दूक्योपनिशादों में गुर की चर्चा किया गया है.जिस साधक को गुरु का निदेशन मिलता है वह सीधे मार्ग से चरम लक्ष्य तक पहुंचते है.गुरु के वचनों को आँखों में अंजन लगाकर ,हृदय रूपी दर्पण परिमार्जित करके ,ममता को भस्म करके जू साधना के पथ पर अग्रसर होने उनको ही पराम्तामादो देखने की मौक़ा मिलेंगे ...यही सन्देश सूफी काव्यों से हमें मिलेंगे.

सम्राट हर्ष वर्धन के बाद भारत भर में उथल पुथल रही थी. हर राजा अपने शासन क्षेत्र का वस्तार करने के कार्य में विलीन रहे.इसके कारण भारत के लोग अत्यंत संकट जनक स्थिति में आये. उसके साथ साथ विदेशी अक्म्रण भी हुए तो उनकी ज़िन्द्गीए और कंटीला हो गए.इतहास साक्षी है १८ वीं सड़ी से १९ वीं सड़ी तक भारत वर्ष के लिए संकट का समय था.अधिकार रूपी मधु पीकर उन्मत्त राजाओं के कारण राजनीतिक अस्थिरता पूरे भारत वर्ष में फ़ैल गए.शासक और शासितों के बीच के रिश्ता में हुए खाई सामजिक जीवन में प्रमुख समस्या रहे.

समाज का व्यक्ती और धर्म से घनिष्ट संबंध है.उस ज़माने में धर्म का नियंत्रण शासकों के हाथ में थे.इसलिए बरहमन ,क्षत्रिय ,वैश्य और शूद्र रूपी दीवारों पर खड़े हुए भारतीय सामजिक व्यस्था का सत्यानाश हो गया.लोग जिस प्रकार का काम करते है ,उसके आधार पर भारतीय मनीषियों ने समाज का विभाजन किया था.मगर इस समय में उसका व्याख्या कुछ लोग दुसरे तरह से करने के कारण सामजिक व्यस्था का नीव हिलने लगे.ऊपर हम बाता चुके है राजनीतिक अस्थिरता के बारे में.उसके साथ ही साथ सामाजिक नीव भी हिलने के कारण भारतीय समाज बहुत खतरे की और मुड़े.समाज में अशांती फैलने लगे.आरती व्यास्था का सर्वनाश हो गया.

ऐसे हाल में लोगों को थोड़ा आश्रय धरम से मिलना था. मगर धार्मिक नेता भी अपने अपने स्वार्थता के लिए कर्म रत थे.उनके अनुयायियीं के बीच भी

झाग्दायें होने लगे.उसेक साथ साथ दुराचार ,अंध विश्वास आदि भी आने के कारण लोग पूर्ण रूप से शांती से वंचित रह गए.इस प्रकार मध्य कालीन भारत के सामाजिक ,धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्रों में अशांती फैलने के कारण लोग पोर्र्ण रूप से ऊब चुके थे.ऐसी हाल में ज्ञानाश्रयी शाखा के कवियों ने अपनी तोल्लिका से समाज में व्याप्त हर प्रकार के अनीतियों के खिलाफ आवाज़ उठाये. भारतीय तथा ईरानी सांस्कृतिक समन्वय से निलकी सूफी विचार धारा भी ग्यान्श्रयी शाखा के अंग हो गए.सूफियों ने भारत को अपना ही देश माना और उसकी भलाई के लिए अपनी क्षमताओं का उपयोग भी किया. आध्यात्मिक क्षेत्र से हुई दोस्ती फिर साहित्यिक क्षेत्र में भी आई .समन्वय और सामंजस्य की गाथाओं से उन लोगों ने भारतीय जन मांस को छुआ .उनके संकुचित मनो भावों का नाश करके उनमें एकता की भावना का पुनर्निर्माण करने की कोशिश सूफी साधकों ने किया. भारत ने अध्यात्म को, यूनान ने सौंदर्य तत्व को, रोम ने न्याय और दंडव्यवस्था को, चीन ने विराट जीवन के आधारभूत नियम को, ईरान ने सत् और असत् के द्वंद को, मिस्र ने भौतिक जीवन की व्यवस्था और संस्कार को, सुमेर और म्लेच्छ जातियों ने दैवी दंड विधान को अपनीअपनी दृष्टि से स्वीकार करके संस्कृति का विकास किया।इन सबका थोड़ा - थोड़ा अंश सूफी विचारधारा में दर्शनीय है. सूफियों ने प्रेममार्ग से भारतीयों के दिलों को जीता.उनको सफलता मिलने का मूल कारण उनकी रचनाएं ही है.अगले अद्ध्याय में प्रमुख सूफी रचनाओं पर प्रकाश डाल रहे है.

==========

अध्याय 3

हिंदी सूफी काव्य सामान्य परिचय

प्रेमाख्यान एक समस्त पद है.प्रेम का आख्यान ,प्रेम प्रधान आख्यान अथवा प्रेम मूलक आख्यान इसके विभिन्न विग्रह है.प्रेमाख्यान में 'प्रेम ' वर्ण्य है और आख्यान माद्ध्यम .प्रेम को आत्मा और आख्यान को शरीर मानना पडेगा.लोक में दोनों का सामान महत्व है.एक दुसरे के बिओना दोनों के अस्तित्व का सवाल ही नहीं होता.

प्रेमाख्यान को दो भागों में विभाजित कर सकते है , शुद्ध प्रेमाख्यान और आद्ध्यात्मिक प्रेमाख्यान .भारतीय प्रेमाख्या पहली कोटी में आते है.इरानी प्रभाव में लिखी गयी प्रेमाख्यान दूसरी कोटी में आती है.लौकिक सत्य और रहस्यात्मक आद्ध्यात्मिक चिंतन के समंजस्मेलन के कारण ही प्रेमाख्यान सर्वाधिक लोकप्रिय रहा है. प्रेमाख्यान झरनों के सामान अपने -अपने देश के अन्तस्थल से निकलकर बहुत दिनों में से उसे आप्लावित किए आए है.

प्रेमाख्यान्कार सच्चे पृथ्वी पुत्र थे. उन लोगों ने भारतीय गावों में रहने वाली जनता की उक्तियों ,भावनाओं तथा मान्यताओं को अपना कर रचनाओं का निर्माण किया.हिन्दी के प्रेमाख्यान साहित्य को हिन्दू प्रेमाख्यान ,सूफी प्रेमाख्यान और

दखिनी प्रेमाख्यान के रूप में विभाजित किया है. अब हम सूफी प्रेमाख्यानों के बारे में चर्चा करेंगे.

सूफी सम्प्रद्द्य का संबंध शामी विचारधारा से प्रभावित इस्लाम धर्म से है.शामी जातियों से प्रेम और विरह का स्वरुप सूफियों ने अपनाया .सूफियों में पाई जानेवाली इल्हाम की कल्पना शामी संस्कारों से मिली हुई चीज़ है.इसके अलावा नव अफलातूनी दर्शन ,आर्य दर्शन , कुरआन आदी का प्रभाव भी दर्शनीय होंगे.सूफ के वस्त्र धारण करने वाले सूफियों की सादगी से ही लोग उनके और आकर्षित हुए. भारत में आने के पहले ही इस्लाम और सूफियों के बीच का अलगाव कम हो गए थे.अधिकांस सूफी साधक सूफी विचारधारा के अनुसार अपना जीवन बिताने लगे थे.सूफी कविओयों ने प्रेमाख्यानों के आरंभ में अल्लाह तथा मुहामेद को प्रणाम करने की विधा इसका उदाहरण है.ओमर खैय्याम ,रूमी ,सनाई जैसे ईरानी सूफी कवियों ने अपनी रचनाओं के ज़रिये सूफी धर्म के आशयों का प्रचार करने लगे.इसका अनुकरण सोदूर भारत में भी होने लगे.सोफ्फी मत के उपदेशात्मक बातों को काव्य उप में बदलकर ,और आकर्षक बनाकर सूफी साधकों ने सूफी धर्म के जड़ों को मज़बूत बनाया

साहित्यकार रचना में जिस द्रव्य को प्रस्तुत करता है उसे भाव ,विचार और कल्पना तत्वों में विभाजित कर सकते है.सूफी प्रेमाख्यानों क,इ कथानकों में अद्भुत समानता हमें मिलंगे.एक संतान विहीन राजा को ताप के बाद संतानोत्पत्ति हिओते है.उसकी बाल्य जल्दी ही बताकर यौवनावस्था पर पहुंचे के बाद कथानक धीमे गती से

आगे बढ़ते है. इसके बाद नायक या नायिका का चित्र दर्शन या स्वप्न दर्शन ...फिर मिलने की कोशिश हो जाते है. किसी न किसी जीवों के सहारे दोनों का मिलन होता है.नायक को विदेश जाना पड़ता है.उसके बीच अन्य सुंदरियों को भी आपदाओं से बचाते है..नायिका के साथ मिलन होने के बाद हम सोचेंगे कि कहानी का अंत हो० गया. लेकिन ,फिर भी उनको विरह ताप भोगना पड़ता है.नायक निरंतर प्रयत्नों के ज़रिये नायिका को अपनाती है.फिर खुशी के साथ जीवन बिताने लगते है.

हिन्दी सूफी प्रेमाख्यानों की शृंखला ' चंदायन ' से शुरू होती है.इसकी रचना मुल्ला दूद ने की है.इसकी रचना सं १४३९ हुई है.चंदायन हिंदी में मुस्लिम कवियों द्वारा लिखित प्राचीनतम उपलब्ध रचना है.इसकी भाषा अवधी है तथा शौरसेनी का प्रभाव इसमें दर्शनीय है.इसमें एक विवाहित पुरुष के साथ परविवाहिता नारी (चन्दा) का प्रेम एवं पलायन का वर्णन हुआ है.

हिन्दी साहित्य की सूफी रचनाओं में 'चंदायन 'का प्रमुख स्थान है.दाऊद ने इस रचना में शरीयत एवं भारतीय साधना पद्धती के साथ सूफियों के प्रेम तत्व का सम्मिश्रण कने की कोशश की है.'चंदायन ' नायिका प्रधान कहानी है.सारे पात्र नायिका चाँद को केंद्र बनाकर ही उभरते है.अक्सर भारतीय एवं फारसी कहानियों में नायक और नायिका विवाहित पाते है.लेकिन इ कभी भी पर-पुरुसू या स्त्री से आकर्षित

नहीं होते.लेकिन इस रचना में इसका ठीक उलटा ठीक ही नज़र आते है.यहाँ ल्लेखाक अपने समाज से अलग होकर चलता है और बाल विवाह एवं नारी पराधीनता पर भी प्रकाश डालता है.

भारतीय नारी जन्म जन्मान्तर में एक ही पाती की हामी है.सूफियों ने भी इसी मान्यता को अपनाया था.लेकिन दाओद जी ने अपनी रचना के ज़रिये समाज के सामने एक नया रूप सामने रखा.विवाहित पुरुष लोरिक के साथ पर्विवाहिता नारी चाँद के प्रेम एवं पलायन का वर्णन करके आप एक नया पंथ दिखाया है.अक्सर रचनाओं में नायक को नायिका के प्रती प्रेम उत्पन्न होते है.मगर इस रचना में इसका ठीक उलटा ही हो रहे है.

मृगावती ;कुतुबन की प्रमुख रचना है.इसमें लेखक ने प्रेम मार्ग के त्याग और कष्ट का निरूपण करके लौकिक व अलौकिक प्रेम का स्वरुप एक साथ दिखाया है.हिन्दू जीवन और सूफी मान्याताओं के मिश्रण इस रचना में दर्शनीय है.चन्द्रे गिरी के राजा का पुत्र राजकुंवर और मृगावती की प्रेम कथा इस रचना में दिखाया है.अपनी इस रचना से कुतुबन यह बताना चाहता है कि जो प्रेम पाने का अधिकारी होता है ,परमात्मा उसी पर प्रेम के रहस्य को प्रकट करता है. परमात्मा से

बिछुड़े जीवात्मा पुन परमात्मा से मिलने तड़पते रहते है. अज्ञान रुपी पर्दा हटने पर दोनों का मिलन होता है.

साधक को प्रेमी के रूप में और परमात्मा को प्रेमपात्र के रूप में चित्रित करके आपने रचना को आकर्षक बनाया है.आचार्य रामचंद्र शुक्ल जी ने इस रचना के बारे मेमे यों कहा है," इस कहानी के द्वारा कवी ने त्याग और कष्ट का महत्व निरूपण करके साधक के भगवद प्रेम का स्वरुप दिखाया है.बीच बीच में सूफियों की शैली पर रहस्यात्मक आभास भी है."आम जनता के आचार ,विचार आदी को इस रचना में महत्वपूर्ण स्थान मिला है.

'जायस का मानस ' कहे जाने वाले मालिक मुहम्मद जायसी की प्रमुख रचना है ' पद्मावत '.इसमें सिंहल द्वीप के राजा की कन्या पद्मावती और रत्नसेन की प्रेम कहानी चित्रित किया है. पद्मावती को ढूँढने निकलनेवाले रत्नसेन की पत्नी नागमती की विरह का भी रम्यक वर्णन इस रचना में हुई है.रत्नसेन और पद्मावती का मिलन हीरामन नामक एक तोते के कारण होता है.यहाँ पद्मावती परमात्मा का ,रत्नसेन जीवात्मा का प्रतीक है.जीवात्मा और परमात्मा का मिलन एक गुरु के सहारे ही संभव हो पायेंगे.इसलिए टा यहाँ गुरु का प्रतीक है.

'पद्मावत ' में लोक गाढा का दूध ,संस्कृति की शर्करा,इतिहास का पंच्मेव ,अद्ध्यात्मा का जल तथा काव्य का मधु उचित मात्रा में मिलाया गया है.ठेठ अवधि भाषा में इसकी रचना हुई है.इसकी रचना मसनवी पद्धती में हुई है.इसमें सूफी प्रेम पद्धती और भारतीय विचारधारा का मिलन हुआ है.प्रेम कथा तथा अद्ध्यातं का मिल्न आपने अच्छी ढंग से किया है.'रामचरित मानस ' जिस प्रकार हिन्दुओं का वेड है ,उसी प्रकार 'पद्मावत 'सूफियों का वेद है. हिन्दू मुस्लिम विचारधाराओं का मिलन और निर्गुण- सगुण का मिलन भी दर्शनीय है.

भारतीय संस्कृति के मूल तत्वों को हृदयंगम करके भारतीय लोक जीवन का विषद वर्णन करके उन्होंने इस रचना और महत्वपूर्ण बनाया है..इस रचना में जायसी जी ने इस्लाम के इजदिया भाव ,सूफी मत के तस्वुफ्फ़ ,महाकाव्यों की मर्यादा आदि का सम्यक मिलन किया है.षत ऋतुओं का वर्णन इस रचना की प्रमुख विशेषता है. पद्मावत हिंदी साहित्य के सर्वोत्तम प्रबंध काव्यों में एक हैइसमें जायसी ने प्राचीन . के अंशों को अपनाकर ही आपने यह रचना के है रामयण.,महाभारत जैसे भारतीय ग्रंथों के पात्रों की तुलना पद्मावत के पात्रों से किया भी है.

'चित्र रेखा' एक छोटा सा अवधी प्रेमाख्यान है.इसमें गंवारू शैली में चंद्रपूर की राजकुमारी चित्ररेखा और कुंवर की कथा का वर्णन किया है.भिन्न आचार और

विश्वास्वाले भारतीय संस्कृति का रम्यक वर्णन इस रचना में दर्शनीय है.भोजपुर जनपथ में प्रचलित कहानी के आधार पर ही इसकी रचना हुई है.

कृष्ण की कथा के आधार पर रची गयी रचना है ,कन्हावत .इसमें सभी सूफी रूथियों का पालन करके कृष्ण की कथा कहा गया है .

पौराणिक कथा पर लोक के अनुसार कुछ परिवर्तन जायसी ने किया है.शुक और कंस को कन्हावत में सामंतों की हैसियत दी गयी है.मसनवी शैली में हुई इस रचना में शृंगार और वीर रसों को प्रमुखता दिया गया है.तत्कालीन भारतीय समाज के समस्त पहलुओं का वर्णन अवधि भाषा में रचित इस रचना में हुई है .

शेख मुफ्तार मंझन द्वारा लिखित ' मधुमालती ' में कनेसर के राजा का पुत्र मनोहर और मधुमालती की प्रेम कथा का वर्णन हुआ है.अन्य सूफी कवियों के समान आप भी कई प्रतीकों के सहारे सूफी सिद्धांतों का प्रचार किया है.भारतीय संस्कृति के आराधक थे मंझन.इस रचना में हर कहीएन्यह तथ्य सुविदित हो जाता भी है.वैवाहिक संबंध केवल शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ती केलिए ही नहीं उसमे कुछ आत्मीय तत्व भी है,यह बात आप अपनी रचना के द्वारा व्यक्त कर रहे है.कवी एक ही सन्देश इस रचना में दुहरा रहे है ,जगत में अमरत्व लाभ करने का एक मात्र उपाय है प्रेम में मरना.

'चित्रावली 'उस्मान की रचना है.इसमें नेपाल देश के राज कुमार सुजान और च्त्रावाली के प्रेम कथा का वर्णन हुआ है.चितावली की कथानक पूर्णतः काल्पनिक है.प्रस्तुत समय के लोक तत्व ,विश्वास,आचार आदी सभी बातों को इसमें चित्रित किया है.सौंदर्य ,प्रेम,विरह, वियोग आदि के माद्ध्यम से आद्ध्यात्मिक तत्वों को समाज में फैलाने की कोशिश किया गया है.

अगली रचना है 'इन्द्रावती '.इसकी रचना नूर मुहम्मद ने किया था.कालिंजर राज्य के कुमार राजकुंवर और इन्द्रावती के कथा का वर्णन इसमें हुआ है.अद्ध्यात्मिक महत्व रखनेवाले कल्पित कथा का वर्न्ण कवी यहाँ किया है.अवधि भाषा में रचित इस रचना में संयोग श्रंगार को प्रमुखता दिया है.

'अनुराग बांसुरी ' नामक रचना में नूर मुहम्मद जी मूरात्पूर के राजा जीव के पुत्र अन्तकरण और सर्वमंगला की प्रम्कथा का वर्णन किया गया है.अवधि भाषा में लिखितिस रचना के पात्रों पर अधिक ध्यान देना है.जीवात्मा के परमात्मा की मिल्न तक की हालों का वर्णन लग भाग उसी तरह के नाम पात्रों को देकर आपने किया है,जटिल आद्ध्यात्मिक रहस्यों का पर्दाफ़ाश करने की कोशिश यहाँ दर्शनीय है.

प्रेमाख्यान परम्परा का एक उत्कृष्ट रचना है, ज्ञानदीप .इसका रचनाकार शेख़्नावी है.नीम्शार के राज कुंवर ज्ञानदीप और देवयानी की कथा इसमें कहा गया है. हिन्दी के सूई प्रेमाख्यानों में ज्ञानदीप एक ऐसा काव्य है जिसमें नायिका देवयानी

रत्नसेन ,मनोहर आदि नायकों की भांती प्रिय की प्राप्टी केलिए प्रयत्न करती दिखाई पड़ती है.प्रकृति वर्णन ,विरह वर्णन आदि भी इस रचना में दर्शनीय है.

कासिम शाह कृत ' हंस जवाहिर ' में बलख नगर के हंस और जवाहिर की कथा कही गयी है.इसकी कथावस्तु काल्पनिक है.

सूफी काव्य की सामान्य विशेषताएं

सूफी मत की सम्पूर्ण साधना प्रेम पर आधारित है.इसी कारण उसके विषय का प्रतिपादन प्रेम की कीली पर घुमते फिरते है.सूफियों के अनुसार लौकिक प्रेम ही अलौकिक प्रेम की रास्ता है.हिन्दी की जितनी भी सूफी प्रेमाख्यान हैउन सब जेम यह तथ्य दर्शनीय भी है.हिन्दी सूफी कवियों ने भारतीय और सूफी पद्धतियों का सुन्दर समन्वय दिखाया है.उनके अनुस्सर्र् विरह ही इस स्रिश्तीए का आदी और अंत है.विरह व्यथा का कभी अंत नहीं होगा.नायिका प्राप्ती के पश्चात प्रायः सभी प्रेमाख्यान समाप्त हो जाता है.

सूफी प्रेम साधना अद्ध्यात्मिक सफ़र ही है.साधक कई मंजिलों को पार करके पूर्ण ज्ञान या 'मारिफात 'प्राप्त करते है.'नासूत '(प्रत्येक मनुष्य की स्वाभाविक स्थिति), मलकूत (देवलोक) ,,इस मंजिल तक पहुँचने की तोबा ,फक्र ,जुहद, सब्र ,रिज़ा ,ताव्व्क्कुल, काना आत जैसे तरीकत के पथ से गुज़ारना होगा .जबरूत में साधक और

साद्ध्य एक हो जाते है.मानवीय प्रेम से ईश्वरीय प्रेम की और लोगों को आकृष्ट करना ही सूफी साधकों का मुख्या उद्देश्य था.

विरह की तीव्रता को समझाने के लिए सभी सूफी कवियों ने बारह मासा का वर्णन किया है.गुरु महिमा का वर्णन भी खूब हुआ है.प्रमुख कथा के साथ कई उप कथाओं का भी मिल्न अन्यत्र दर्शनीय है.परम वर्णन करते समय भारतीय संस्कृति की सीमाओं के अन्दर में ही रहने की कोशिश सूफी कवियों ने किया है.ज्यादातर सूफी कवियों ने अवधि भाषा का प्रयोग किया है.अवधि भाषा को काव्य भाषा के रूप में बदलने का पूर्ण श्री सूफी कवियों को ही है.

लगभग सभी सूफी प्रेमाख्यानों में ईश्वरीय सौंदर्या की अवधारणा नायिकाओं द्वारा की गयी है.धर्म को महत्व देनेवाले सूफी साधक उसके बाद गुरु को स्थान देते है.गुरु जीवें की समस्याओं को ठीक करके पथ्दिखाते है.सूफी कवियों ने अपने निष् कपट ,प्रखर प्रेममयी ,मधुर व् समंव्याय प्रधान वाणी से जनमानस के तप्त ह्रदय को सींचा.सूफी दर्शन में नारी को ईश्वर की हैसियत दिया गया है.सूफी कवी रूमी ने लिखा है , "स्त्री ईश्वर की किरण है,वः केवल सांसारिक प्रेमिका नहीं है,वः निर्मात्री है ,निर्मित नहीं "

सांसारिक समस्याओं को सुधारते हुए कैसे जीवन यापन करना है यह सूफी प्रेमाख्यान्कारों ने दिखाया.सामान्य चेतना की आतंरिक गहराईयों को टटोलने का जो प्रयास सूफी कवियों ने किया ,वह अपने आप एक सफल प्रयास है.

जीवन मे हम प्रतिक्षण नवीन अनुभव प्राप्त करते हैं और हमें प्रतिक्षण कई लोगो से मिलना होता है, अत: जीवन मे सफलता प्राप्त करने के लिए या लोकप्रिय बनने के लिए क्या क्या करना है इसका वर्णन सूफी काव्यों में अन.्यत्र दर्शनीय है उन तत्वों को. समेटने की कोशिश यहाँ हो रहे है.

हमेशा मुस्कराते रहिए। प्रसन्नता व मुस्कराहट बिखेरने वाले लोगो के सैकडो मित्र होते है। कोई भी व्यक्ति उदास चेहरे के पास बैठ्ना पसंद नही करता। बातचीत मे अपनी तकलीफों का रोना मत रोइए, क्योकि लोग इस से आप के पास आने से हिचकिचाएगें, वे यही समझेंगे कि उसके पास जाते ही बह अपनी तकलीफों का रामायण पढ्ने लग जाएगा। दुसरो की तारीफ जी भर कर किजिए पर तारीफ इस तरह होना चाहिए कि समने वाले को ऐसा न लगे कि आप उसे मुर्ख बना रहे है। आप के वस्त्र सूरुचिपूर्ण हों तथा आपकी बातचीत मे किसी प्रकार से हलकापन न हो, आप गम्भीरता से अपनी बात को कहने का प्रयत्न किजिए.

किसी भी अधिकारी या ऊचें से ऊचें व्यक्ति से मिलते समय मन मे किसी प्रकार की हिचकिचाहट अनुभव न किजिए, अपने बात नम्रता से, पर दृढतापूर्वक उस के सामने रखिए।बार-बार अपनी गलती स्वीकार मत किजिए और बार बार क्षमा याचना करना भी ठीक नही है।किसी भी प्रकार से अपने उपर क्रोध को हावी मत होने दिजिए। यदि सामने वाला क्रोध करता भी है तो चुपचाप सहन कर लिजिए। केवल

क्रोध को सहन करने के बाद ही वह पछताएगा और आप के प्रति उसका सम्मान जरुरत से ज्यादा बढ जाऐगा।मित्र को या किसी को भी मिलते समय उसको उस के नाम से पुकारिऐ और उस से ऐसी बातचीत किजिए जो उस को रुचिकर हो।

हमेशा आप ऊची सोसाइटी मे रहिए। द्स कलर्को के साथ घूमने के बजाए यदि आप किसी एक अधिकारी के साथ आधे घंटे के लिए भी घूम लेंगे तो लोगो मे आप का सम्मान और प्रतिष्ठा बढ जाएगा। आप यथासंभव कम से कम असत्य बोलिए,क्योकि असत्य ज्यादा समय तक नही चलता।

अपने आपको हमेशा तरो ताज़ा रखिए क्योकि बीमार, सुस्त और यदि आप थके हुए लगेगें तो आप ज्यादा उन्नति नही कर पाऐगे और न समाज मे ज्यादा लोकप्रिय हो सकेगें।वस्त्र साफ हों, स्वच्छ और आप के प्रकृति के अनुकूल हों लोगों को देख कर या उनके अनुकूल कपडे पहना आपकी व्यक्तिव (Personality) के अनुकूल नही होगा।अपनी स्मरण शक्ति प्रखर रखिए, यथासंभव मित्रो व परिचितों के नाम याद रखिए।इस बात का ध्यान रखिए कि आप की बातचीत से सामने वाले का ईगो संतुष्ट होना चाहिए।सामने वाला जिस प्रकार का या जिस रुची का व्यक्ति हो उसी के अनुरुप बातचीत करें

यह गुर जितने साधारण है उतने ही प्रभावशाली हैं यदि आप इन्हे अपने दैनिक कार्यो मे अपनाएगे तो निश्चय ही आप के व्यक्तिव मे चार चांद लग जाएंगे।

आप का प्रभाव दुसरो पर स्थाई रहेगा। यह पढने व देखने मे जितना आसान है उतना ही दैनिक कार्यों मे अपनाना कठिन भी। क्योकि आदमी अपनी आदतों से बंधा होता है और किसी भी नई आदत या शैली को अपनाने के लिए वक्त लगता है।

इस प्रकार आप उपरोक्त गुरों को अपना कर समाज मे श्रेष्ठ बनने का प्रयास करने की सलाह सूफी कवी दे रहे है .

हिन्दू सम्प्रदाय के उस प्राचीनकाल के इतिहास में हमें लक्ष्मण जैसे भाई, हनुमान जैसे सेवक, सीता जैसी वफादारी एवं त्याग का पर्याय समझे जाने वाली देवी तथा अर्जुन और एकलव्य जैसे महान शिष्यों का उल्लेख मिलता है। हमें विश्वकर्मा तथा धनवंतरि जैसे महान ऋषियों का जिक्र मिलता है। इससे प्रेरित होकर सूफी कवियों ने भी अपनी रचनाओ में गुरुओं को प्रामुख्य दिया हैजैसे पद्मावत के . सुआ,चंदायन के मैना...

सनातन अथवा हिन्दू धर्म की संस्कृति संस्कारों पर ही आधारित है। हमारे ऋषि-मुनियों ने मानव जीवन को पवित्र एवं मर्यादित बनाने के लिये संस्कारों का अविष्कार किया। धार्मिक ही नहीं वैज्ञानिक दृष्टि से भी इन संस्कारों का हमारे जीवन में विशेष महत्व है। भारतीय संस्कृति की महानता में इन संस्कारों का महती योगदान है।

प्राचीन काल में हमारा प्रत्येक कार्य संस्कार से आरम्भ होता था। उस समय संस्कारों की संख्या भी लगभग चालीस थी। जैसे-जैसे समय बदलता गया तथा व्यस्तता बढती गई तो कुछ संस्कार स्वत: विलुप्त हो गये। इस प्रकार समयानुसार संशोधित होकर संस्कारों की संख्या निर्धारित होती गई। गौतम स्मृति में चालीस प्रकार के संस्कारों का उल्लेख है। महर्षि अंगिरा ने इनका अंतर्भाव पच्चीस संस्कारों में किया। व्यास स्मृति में सोलह संस्कारों का वर्णन हुआ है। हमारे धर्मशास्त्रों में भी मुख्य रूप से सोलह संस्कारों की व्याख्या की गई है। इनमें पहला गर्भाधान संस्कार और मृत्यु के उपरांत अंत्येष्टि अंतिम संस्कार है। गर्भाधान के बाद पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण ये सभी संस्कार नवजात का दैवी जगत् से संबंध स्थापना के लिये किये जाते हैं।

नामकरण के बाद चूडाकर्म और यज्ञोपवीत संस्कार होता है। इसके बाद विवाह संस्कार होता है। यह गृहस्थ जीवन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण संस्कार है। हिन्दू धर्म में स्त्री और पुरुष दोनों के लिये यह सबसे बडा संस्कार है, जो जन्म-जन्मान्तर का होता है।

विभिन्न धर्मग्रंथों में संस्कारों के क्रम में थोडा-बहुत अन्तर है, लेकिन प्रचलित संस्कारों के क्रम में गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, विद्यारंभ, कर्णवेध, यज्ञोपवीत, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्तन, विवाह तथा अन्त्येष्टि ही मान्य है।

गर्भाधान से विद्यारंभ तक के संस्कारों को गर्भ संस्कार भी कहते हैं। इनमें पहले तीन (गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन) को अन्तर्गर्भ संस्कार तथा इसके बाद के छह

संस्कारों को बहिर्गर्भ संस्कार कहते हैं। गर्भ संस्कार को दोष मार्जन अथवा शोधक संस्कार भी कहा जाता है। दोष मार्जन संस्कार का तात्पर्य यह है कि शिशु के पूर्व जन्मों से आये धर्म एवं कर्म से सम्बन्धित दोषों तथा गर्भ में आई विकृतियों के मार्जन के लिये संस्कार किये जाते हैं। बाद वाले छह संस्कारों को गुणाधान संस्कार कहा जाता है। दोष मार्जन के बाद मनुष्य के सुप्त गुणों की अभिवृद्धि के लिये ये संस्कार किये जाते हैं।

हमारे मनीषियों ने हमें सुसंस्कृत तथा सामाजिक बनाने के लिये अपने अथक प्रयासों और शोधों के बल पर ये संस्कार स्थापित किये हैं। इन्हीं संस्कारों के कारण भारतीय संस्कृति अद्वितीय है। हालांकि हाल के कुछ वर्षो में आपाधापी की जिंदगी और अतिव्यस्तता के कारण सनातन धर्मावलम्बी अब इन मूल्यों को भुलाने लगे हैं और इसके परिणाम भी चारित्रिक गिरावट, संवेदनहीनता, असामाजिकता और गुरुजनों की अवज्ञा या अनुशासनहीनता के रूप में हमारे सामने आने लगे हैं।समय के अनुसार बदलाव जरूरी है लेकिन हमारे मनीषियों द्वारा स्थापित मूलभूत सिद्धांतों को नकारना कभीश्रेयस्कर नहीं होगा। मुसलमान होने पर भी हिन्दू आचारों को गहराई से अपनाकर सूफी साधक यही सन्देश हमें सूना रहे है.

पाश्चात्य एवं हिंदी प्रेमाख्यानों के कथानक का संगठन एक जैसा हां है.नायक और नायिका के रूप में राजकुमार और राजकुमारी ही आते है.नायिका को प्राप्त करने नायक कई मुसीबतों से लड़ता भिड़ता है और अंत में फल प्राप्ती होती

है.इसी रूप में कथानक का संगठन किया है.कहानी को रोचक बनाने के लिए नाटकीय शैली को इस्तमाल किया है.

प्रेमाख्यानों से गुज़रते वक्त हमें कथानकों में विशेष प्रकार की समानता का अनुभव होंगे.एक संतानहीन राजा को संतान मिलते है.उसकी शिक्षा ,बाल्य लीलाएं आदि कम शब्दों में बताकर युवावस्था का ही वर्णन ज़्यादा करता है.इस अंश को कथा का प्रारंभ कहा जाता है.इसके बाद नायिका के चित्र दर्शन या मिलन होता है.किसी पक्षी या या अन्य तरीकों से एक दुसरे से मिलने की कोशिश सुरू होते है.

अक्सर नायक को विदेश जाना पड़ता है.कहानी में कुतूहलता लाने के लिए आशार्य तत्वों ,अप्सराओं आदि के कारण नायक को हुए मुसीबतों का वर्णन होता है.कथानक कू गाती देने के लिए उप कथाओं का वर्णन होता है.इसी बीच नायक और नायिका का मिलन होता है.अब पाठक सोचेंगे कहानी ख़त्म होनेवाली है.मगर दोनों को फिर भी विरह सहना पड़ता है.इसी अवसर पर देवी शक्तिउयों की स्शारा उनको मिलते है .और मिलन होता है फिर दोनों खुशी से जीत भी है.

कथानक में **प्रेम निरूपण** के दाम्पत्य परक ,काम परक ,अद्ध्यात्म परक आदि विविध रूप सामने आते है.प्रेमाख्यानों में सामजिक एवं नैतिक कार्यों का वर्णन भी हुआ है.

भारतीय सूफी कवियों ने सूफी मत में प्रचलित जितने भी सिद्धांत थे सभी को अपनाए थे.कुरआन में वर्णित अल्लाह जो 'कुन ' नामक एक शब्द से पूरे सृष्टि रचना के सामर्थ्य वाले है,उसका वर्णन 'भाषा प्रेमरस ' में शेख रहीम ने ऐसा दिखाया है

"एकै शब्द कहा कुन केरा सिरजा भूमी आकाश घनेरा "

अदृश्य सता का वर्णन जायसी ने ऐसा किया है ,

" अलख रूप अकबर सो करता.वह सबसों सब ओ ही सो बरता

परगट गुपुत सो सर्ब ब्यापी .धर्मी चीन्ह ,न चीन्हेऐन पापी

न ओही पूत पिटा ना माता.न ओही कुटुंब न कोईए संग नाता

जाना न काहू न कोइ ओही जाना .जहां लगी सब ताकर सिर्जना

जो चाहा सो कीन्हसी कराइ जो चाहे कीन्ह

बर्जहार न कोइ सबै चाही जिउ दीन्ह " जायसी पद्मावत

अर्थात परम सत्ता अरूप एवं अवर्णनीय है.वह अदृश्य होते हुए भी संपूर्ण दृश्यमान जगतात में व्याप्त है.न उसके पुत्र,न पिटा न माता है,उसे कोई सांसारिक संबंध बंध नहीं सकता .जहां तक दृष्टी जाती है ,जितना भी यह दृश्यमान जगत है ,सब उसी की कृती है.वह जो कुछ चाहता है ,करता है उसकी इच्छा में कोइ व्यधान

उपस्थित नहीं कर सकता .इन पंक्त्यों में और कुरा की आयातों में साम्यता अधिक दर्शनीय है.

हिन्दी सूफी कवियों ने अपनी कथा के अंतर्गत सर्वात्मवाद ,अद्वैतवाद एवं विशिष्टाद्वैतवाद से मिलती हुए विचारों को व्यक्त किया है.सृष्टी की रचना करनेवाले वह शक्ती हमारे सभी कार्य कलाप देख रहे है ,उसके नज़रों से बचकर कुछ करना ना मुमकिन है.कासिम शाह ने अपनी रचना हंस जावाहिर में यही बात बता रहे है.

"जो चाहे सो विधि करैं, अहै आपु अकेल

गंगा मर बहु तर रही ,अहै सो अचरज खेल "

कासिम्शाह ,हंस जवाहिर

एक ही परम तत्व सारी सृष्टी में समाया हुआ है.ज्ञान के क्षेत्र से अन्भूती के क्षेत्र में आकर सारी सृष्टी में वह समा हुआ है.बिम्ब प्रतिबिम्ब की वास्ते सूफी कवी अहम् ब्रह्मास्मी अथवा अनलहक की भावना को दर्शाते है.परमात्मा के अत्यन निकट रहने पर भी मानव को उसका आभास नहीं होता .काल पास आने पर वह पछताने लगता है उसमा चित्रावली में इसकी सूचना दी है

" मृग ज्यों तरीन तृण तृण ढूंढत बासा

जब किरात नाभि कटी लेई .मृग पछताई तहां जिउऊ देई

मृग मद माह बॉस ज्यों रहई .त्यों घाट मांह निरक्षण अहई "

उस्मान चित्रावली

इस प्रकार सूफी कवियों ने सूफी धर्म के सभी सिद्धांतों का परिचय अपनी रचनाओं में दिया है.अहम् की भावना का नाश करके आत्मा और परमात्मा एकत्व को प्राप्त होते है.अद्वैतवाद के आत्मा और परमात्मा की एकता और परमात्मा और जगत की एकता का निदर्शन सूफी काव्य में हुआ है.सूफी कवी सारे जगत में उस परम सत्ता के संबंध ही पाया उसके बारे में ही लिखा .सूफी कवी भौतिकता को ही आध्यात्मिकता का आधार मानते है .

सूफी काव्यों में नायिका को इश्वर का प्रतीक माना है.सूफी कवी रूमी ने स्त्री की बारे में बताया है , " स्त्री इश्वर की किरण है ,वह केवल सांसारिक प्रेमिका नहीं है,वह निर्मात्री है ,निर्मित नहीं ".सूफी कवी मानते है नायिका का रूप सृष्टी के कण कण में व्याप्त है.उनके नख शिख वर्णन भी अत्यन रोचक रूप से किया गया है .

" निर्फलक ससी दुयिज लीलारा ,नव खंड तीन भवन उजियारा

वादन पासव बूँद चाहूं पासा, कच पेचिं जणू चाँद गरसा

मृगमद तिलक तही पर धारा ,जानहीं चाँद राह बस पारा "

चंदायन ,मुल्लादावूद

श्रींगार रस के विरह और संयोग का वर्णन सूफी कवियों ने किया हैविभिन्न ऋतुओं को संयोग और वियोग रसों के उद्दीपनो. के रूप में इस्तमाल किया हैउसके साथ वीर रस को भी सूफी कवियों. ने प्रामुख्य दिया हैपरमात्मा . इसका वर्ना सूफी कवियों ने सांसारिक प्रेम .प्राप्ति के लिए जीवात्मा तड़पते रहते है शब्दालंकार और अर्थालंकारों का प्रयोग सूफी .कहानियों के माद्ध्यम से किया है कवियों ने सहीढंग से किया हैकाव्य के स्वाभाविक प्रवाह. में बाधा न डालते हुए अलंकारों का प्रयोग करने के कारण रीतिकालीन कवियों के सामान निकृष्ट अलंकारों के प्रयोग करने वाले के रूप में वे नहीं जाने जाते.

हिन्दी प्रेमाख्यानों में तत्कालीन लोक जीवन का सम्यक वर्णन अपनी रचनाओं में किया हैलोक) लोक संस्कृति केंतार्गत आनेवाले तीनों श्रेणियों. विश्वास और परम्पराएं,रीते रिवाज़ तथा प्रथाएं और लोक साहित्य का वर्ना सूफी (कुछ आलोचकों ने सूफी रस्च्नाओं को तत.कवियों ने किया है युगीन लोक जीवन के मुकुट कहकर पुकारा है.

जीवन मे सुख-शान्ति व समृधि प्राप्त करने के लिए स्वस्थ शरीर की नितांत अवश्यकता है क्योकि स्वस्थ शरीर मे ही स्वस्थ मन और विवेकवती

कुशाग्र बुद्धि प्राप्त हो सकती है स्वस्थ मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए उचित निद्रा,श्रम, व्यायाम और संतुलित आहार अति अवश्यक है। पाचों इन्द्रियों के विष्य के सेवन में की गई गलतियों के कारण ही मनुष्य रोगी होता है। इस मे भोजन की गलतियों का सब से अधिक महत्व है। अधिकांश लोग भोजन की सही विधि नही जानते। गलत विधि से गलत मात्रा मे अर्थात अवश्यकता से अधिक या बहुत कम भोजन करने से या अहितकर भोजन करने से जठराग्नि मंद पड जाती है, जिससे कब्ज रहने लगता है। तब आँतों मे रुका हुआ मल सड्कर दूषित रस बनाने लगता है। यह दूषित रस ही सारे शरीर मे फैलाकर विविध प्रकार के रोग उत्पन्न करता है। शुद्ध आहार से मन शुद्ध रहता है। साधारणत: सभी व्यक्तियों को आहार के कुछ नियमों को जानना अत्यंत आवश्यक है। जैसे-

बिना भुख के खाना रोगों को आमंत्रित करता है। कोई कितना भी आग्रह करे या आतिथ्यवश खिलाना चाहे पर आप सावधान रहें। सही भुख को पहचानने वाले मानव बहुत कम होते हैं भूख न लगी हो फिर भी भोजन करने से रोगों की संख्या बढ्ती जाती है।एक बार किया हुआ भोजन जब तक पूरी तरह पच न जाए, खुलकर भुख न लगे दुबारा भोजन नही करना चाहिए । एक बार आहार ग्रहण करने के बाद दूसरी बार आहार ग्रहन करने के बीच कम से कम छ: घंटे का अन्तर रखना चाहिए । भोजन के प्रति रुचि हो तब समझना चाहिए कि भोजन पच गया है, तभी भोजन ग्रहन करना चाहिए।

रात्री के आहार के पाचन में समय़ अधिक लगता है इसलिए रात्री के प्रथम प्रहर में ही भोजन कर लेना चाहिए। शीत ऋतु मे रातें लम्बी कारण सुबह भोजन जल्दी कर लेना चाहिए और ग्रर्मियों मे दिन लम्बे होने के कारण सायंकाल का भोजन जल्दी कर लेना उचित है।

अपनी प्रकति के अनुसार उचित मात्रा मे भोजन करना चाहिए। आहार की मात्रा व्यक्ति की पाचनशक्ति व शारीरिक बल के अनुसार निर्धारित होती है। स्वभाव से हलके पदार्थ जैसे कि चावल, मूँग, दूध अधिक मात्रा मे ग्रहन करना चाहिए परंतु उड्द, चना तथा पिट्टी के पदार्थ स्वभावत: भारी होते है, जिन्हे कम मात्रा मे लेना उपयुक्त रह्ता है।

भोजन स्निग्ध होना चाहिए। गर्म भोजन स्वादिष्ट होता है, पाचनशक्ति को तेज करता है और शीघ्र पच जाता है। ऐसा भोजन अतिरिक्त वायु और कफ को निकाल देता है। ठंडा या सूखा भोजन देर से पचता है। अत्यंत गर्म अन्न बल का हास करता है। स्निग्ध भोजन शरीर को मजबूत बनाता है, उस का बल बढता है और वर्ण मे भी निखार लाता है। चलते हुए, बोलते हुए अथवा हँसते हुए भोजन नही करना चाहिए।

दूध के झाग बहुत लाभदायक होते है। इसलिए दूध को खूव उलट पुलटकर, बिलोकर, झाग पैदा करके पीऐं। झागों का स्वाद ले कर चूसें। दूध मे जितना ज्यादा झाग होगें, उतना हे वह लाभदायद होगा।

एक सप्ताह से अधिक पुराना आटे का उपयोग स्वास्थय के लिए लाभदायक नही है ।

स्वादिष्ट अन्न मन को प्रसन्न करता है, बल व उत्साह बढाता है तथा आयुष्य की वृद्धि करता है, जबकि स्वादहीन अन्न इसके विपरित असर करता है।

सुबह सुबह भरपेट भोजन न करके हल्का फुल्का नाश्ता ही करें।

भोजन करते समय चित्त को एकाग्र रख कर सबसे पहले मधुर, बीच मे खट्टे और नमकीन तथा अंत मे तीखे व कडवे पदार्थ खाने चाहिए। अनार आदि फल तथा गन्ना भी पहले लेने चहिए। भोजन के बाद आटे के भारी पदार्थ, नये चावल या चिडवा नही खाना चाहिए।

पहले धी के साथ कठिन पदार्थ, फिर कोमल व्यंजन और अंत मे प्रवाही पदार्थ खाने चाहिए।

माप से अधिक खाने से पेट फूलता है और पेट मे से अबाज आती है। आलस होता है, शरीर भारी होता है। माप से कम खाने से शरीर दुबला होता है और शिक्त का क्षय होता है ।

बिना समय के भोजन करने से शक्ति का क्षय होता है, शरीर अशक्त बनता है। सिर दर्द और अजीर्ण के भिन्न-भिन्न- रोग होती हैं। समय बीत जाने पर भोजन

करने से वायु से शरीर कमजोर हो जाती है, जिससे खाया हुआ अन्न शायद ही पचता है। और दुबारा भोजन करने की इच्छा नही होती।

जितनी भूख हो उससे आधा भाग अन्न से, पाव भाग जल से भरना चाहिए और पाव भाग वायु के आने जाने के लिए खाली रखना चाहिए। भोजन से पूर्व पानी पीने से पाचनशक्ति कमजोर होती है, शरीर दुबला होता है। भोजन के बाद तुरंन्त पानी पीने से आलस्य बढ़ता है और भोजन सही नही पचता। बीच मे थोडा सा पानी पीना हीतकर है। भोजन के बाद थोडा सा छाछ पीना आरोग्यदायी है। इससे मनुष्य कभी रोगी नही होता।

प्यासे व्यक्ति को भोजन नही करना चाहिए। प्यासा व्यक्ति भोजन करता है तो उसे आँतों के भिन्न-भिन्न रोग होते है। भूखे व्यक्ति को पानी नही पीना चहिए। अन्न सेवन से ही भूख को शांत करना चाहिए।

भोजन के वाद बैठे रहने वाले के शरीर में आलस्य भर जाता है। बायीं करवट ले कर लेटने से शरीर पुष्ट होता है। सौ कदम चलने वाले के उम्र बढती है और दौड़ने वाले की मृत्यू उसके पिछे ही दौड़ती है।रात्री को भोजन के तुरन्त बाद शयन न करें, यह सूफी कवियों की बहुज्न्ता के मिसाल के रूप में ले सकते है.

आध्यात्मिकता इन्सान की प्रकृति में रची-बसी है। भौतिकवादी जीवन-प्रणाली के सारे भोग-विलास, ऐश व आराम सिर्फ़ शरीर को सुख देते हैं, आत्मा प्यासी

रह जाती है। मानव-प्रकृति यह प्यास बुझाने के लिए व्याकुल रहती है। रहस्यवाद, सूफ़ीवाद, सन्यास, वैराग्य, संसार-त्याग (रहबानियत) और ब्रह्मचर्य आदि इसी प्यास के बुझाने के रास्ते समझे जाते हैं। लेकिन वह आत्मिक सुकून ही क्या जो दाम्पत्य, पारिवारिक व सामाजिक ज़िम्मेदारियों से भाग कर हासिल किया जाए! वह आध्यात्मिक शांति क्या जो उस सांसारिक जीवन-संघर्ष से फ़रार अख़्तियार करके प्राप्त की जाए जिसकी चुनौतियां और कठिनाइयां मनुष्य की मनुष्यता को निखारती, विकसित करती और समाज के लिए उपयोगी व लाभकारी बनाती हैं।

इसके साथ, यह समस्या तो बनी ही रहती है कि कितने लोग अपने सामाजिक उत्तरदायित्व से भाग कर मठों, ख़ानक़ाहों, आश्रमों, गुफ़ाओं और पर्वतों पर ज़िन्दगी गुज़ार सकते हैं? शायद औसतन एक लाख में एक। फिर बाक़ी मानवजाति के लिए आध्यात्मिक प्यास बुझाने का क्या रास्ता है? बल्कि, रास्ता है भी या नहीं? आइए देखें वह इस्लाम क्या कहता है जिसका आह्वान है कि वह ज़िन्दगी के हर क्षेत्र, हर मामले में मार्गदर्शन भी करता है और उत्तम व श्रेष्ठ व्यावहारिक विकल्प भी पेश करता है।

नैतिक मूल्यों के ह्रास ने आज समाज को मानवता के स्तर से बहुत नीचे गिरा दिया है। भ्रष्टाचार, घपलेघोटाले-, रिश्वत और क़ानूनहीनता मानवजीवन के -ब-प्रत्येक विभाग में रचस गयी है। झूठ, धोखाधड़ी, मिलावट, कालाबाज़ारी आदि बुराइयों ने समाज में जो बिगाड़ पैदा किया है, मानवता उसके नीचे कराह रही है। 'लिव इन रिलेशन' और समलैंगिकता जैसे मानवताविरोधी और अप्राकृतिक कृत्य क़ानूनी -

मान्यता प्राप्त कर रहे हैं। स्वेच्छिक व्यभिचार को अपराध कीसूची से निकाल दिया गया है जिसके फलस्वरूप ख़ून के रिश्ते भी कलंकित हो रहे हैं। अपहरण और सामूहिक बलात्कार की घटनाएं सामान्य हो गई हैं। वैधअवैध तरीके से राजस्व उगाही - घर पहुंचा दिया है जिसके कारण नैतिकता और -की सरकारी नीति ने शराब को घर सदाचरण समाप्त हो रहे हैं और आपराधिक प्रवृत्ति फलफूल रही है। चोरी-, लूट, हत्या जैसे अपराधों ने एक जंगल राज की स्थिति पैदा कर दी है।इन सबसे अपनी प्रजाओं को कैसे बचाना है, एक सफल शासक की गुण क्या क्या है ,जैसे कई विषयों पर सूफी काव्यों में चर्चा हुई है

"भक्ति और प्रेम से मनुष्य नि:स्वार्थी बन सकता है। मनुष्य के मन में जब किसी व्यक्ति के प्रति श्रद्धा बढ़ती है तब उसी अनुपात में स्वार्थपरता घट जाती है।" स्वामी विवेकानंद जी का यह कथन अत्यंत ध्यान देने योग्य है व्यक्तिगत और सामूहिक सदाचार उसकी प्रकृति बन जाएगी और समाज का बिगाड़ स्वाभाविक रूप से समाप्त हो जाएगा। समाज में व्याप्त अनैतिकता, चरित्रहीनता, अन्याय, अपराध व शोषण का कोई उपाय सफल न हो रहा हो (बल्कि स्थिति बिगड़ती ही जा रही हो) और आम लोग, कोई विकल्प न पाकर हताश, मायूस हो चुके हों तो यह स्थिति बड़ी चिन्ताजनक...बल्कि घातक...है। ऐसे में अगर खुले दिमाग़ व विशालहृदयता के साथ और पूर्वाग्रह से मुक्त रहकर विचार किया जाए तो मालूम होगा कि सिर्फ़ एक विकल्प है और वह है सूफी काव्य. . सूफी कवियों ने अपनी रचनाओं के द्वारा निस्वार्थी

मानव का निर्माण करने का कोशिश किया है. अब हम हिन्दी सूफी काव्यों में प्रकृती का वर्णन कैसे हुआ है इसका अद्ध्ययन करेंगे .

****

विभिन्न ऋतुओं का वर्णन सूफी कवियों ने किया है, देखिये ,

" ऋतू वसंत नौतन वन फूला ,जहाँ तहां भौर कुसुम रंग झूला

आहे कहूं सो भौर हमारा ,जेहि बिनु नाही बसंत उजारा "

नूर मुहम्मद .इन्द्रावती

अगहन में दिन घटता है और रात्री वृधी प्राप्ता है

" सुख दिन भांती घटत तन जाई

दुःख औ निस तिल तिल अधिकाई " मंझन ,मधुमालती

सावन में जिस प्रकार वर्षा की झाड़ी लगी है ,उसी प्रकार नायिका की आँखों से आंसू बहती रहती है

" सावन झाड़ी अंस की लागी ,चोली चीर चुनर भाई दागी "

शेक् रहीम ,भाषा प्रेम रस

फागुन में प्रकृती में होनेवाले परिवर्तन का सूक्ष्म अंकन उस्मान जी ने किया है ,

" फागुन हाते जो तरु पतझारी ,ते सब भये चैट हरियारी

मोही पतझार जो भा बिन्सायी ,सो न सखी भोला अव्तायी "

उस्मान ,चित्रावली

ग्रीष्म में प्रकृती का रूप भीषण हो जाता है ,

" हॉट भलो होतिऊ जरी झारा ,देह चढ़ावत राखु प्यारा "

नूर मुहम्मद ,इन्द्रावती

सूफी कवियों के सूक्ष्म दृष्टिकोण यहाँ प्रकट हो रही है.प्रकृती में हो रही हर बदलाव और मानव के विभिन्न अवस्थाओं से मिलाव से आप प्रकृती और मानव के रिश्ता के मूल्य ही दिखा रहे है.

संसार में कोइ ऐसा वस्तु नहीं है जो मानव को शाश्वत सुख प्रदान करें.अनादी कल से ही प्रकृती एक नियम से चल रहे है.प्रकृती के प्रत्येक उपादानों के बीच एक संतुलन बना हुआ है.मानव मूल रूप में प्रकृती से जुड़े हुए है. फिर भी वह कभी कभी यह भूल जाते है कि वह भी प्रकृती का हिस्सा है.मानवक प्रकृति का फल है और उस परमात्मा का हृदय है और प्रकृती जड़ें.

प्रकृती को इश्वर के रूप में मानने की प्रथा भारतीयों ने अपनाया था.इसके बारे में हम पिछले अद्ध्यायाओं में विस्तृत चर्चा कर चुके है. सूफी कवियों की रचनाओं में भी इसका झलक दर्शनीय है.नूर मुहम्मद ने अपनी 'इन्द्रावती 'नामक रचना में लिखा है

" तुम्ही देह धरे सब धाओं .रवि ससी नीरज कुर्माद्नी नाउन "

नूर मुहम्मद ,इन्द्रावती

अर्थात वही परमसत्ता सर्वत्र व्याप्त है ,उसी एक के रवि ,ससी ,नीरज और कुमुदिनी विभिन्न नाम है.जायसी ने इसका मनोरम वर्णन ऐसा किया है ,जिस प्रकार सरोवर में पडी हुई पर्चाहीपास होते हुए भी स्पर्श नहीं की जा सकती है ,उसी प्रकार स्वर्ग जो धरती पर छाया हुआ है या परमात्मा जो सर्व व्याप्त है उसको पाना आसान काम नहीं है.

"साखर देख एक मैं सोयी .रहा पानी औ पान न होई

सरग आयी धरती महँ छावा .रहा धरती पी धरत न आवा "

मालिक मुहम्मद जायसी ,पद्मावत

इन पंक्तियों से सूफी कवी अपने पर्यावरण के प्रती कितने जागरूक थे ,इसकी सूचना हमें मिल रहे हैं.अग्नि ,वायु , पृथ्वी और पानी मानव को जीने के लिए अत्यन आवश्यक है.इनके बिना जीने की कल्पना तक कर नहीं पायेंगे.उस्मान ने अपनी रचना ' चित्रावली 'में इसकी सूचना यों दे रहा है ,

"अगिनी पवन राज पाने के भाँती भाँती व्योहार

आपु रहा सब माहि मिली ,को निवरा वाई पार "

उस्मान , चित्रावली

प्रकृती को इश्वर मानने की प्रथा का ज्वलंत व्याख्या जायसी ने ही किया है .उस ज्योतिर्मय की ज्योती से ही सूर्या ,चन्द्र ,नक्षत्र देदीप्यमान है ,रत्न पदार्थ ,माणिक्य और मोटी में भी उसी का प्रकाश है.प्रकृती के मद्ध्य दृष्टिगोचर होने वाली सारी दीप्ति उसी से है.

" रवि ससी नखत दिपही ओही जोती रत्न पदार्थ मानिक मोती

जहन जहन बिहंसी सुभाव्ही हंसी .तहं तहं चिटिक जोती परगासी "

जायसी ,पद्मावत

गहन आद्धायात्मिक तत्वों को भी प्रकृती से उदाहरण लेकर समझाने की कोशिश सूफी कवियों ने किया था .कासिम शाह की पंक्तियाँ देखिये,

" जग म्हण चाई किरण सब,ज्योती मंच कैलास

तपसी थकित जगत के ,बैठ सो तेहि की वास "

अर्थात जिस प्रकार सूर्या का अंश है ,उसमें सूर्या के सभी तत्व एवं गुण वर्तमान है ,उसी प्रकार आत्मा भी परमात्मा का अंश है. अब्दु समद ने बूँद और समुद्र के साम्य से इश्वर और जीव का अंश अंशी भाव स्पष्ट किया है.उनका कहना है की यह अत्यंत आश्चर्य की बात अवश्य है की बूँद में समुद्र समाया हुआ है.वास्तव में सत्य

यही है,परमात्मा और जीवात्मा के मिलन का इतण सजीव एवं मार्मिक चित्रण सिर्फ उनको ही करने की क्षमता है ,जो अत्यंत प्रकृती से मिलकर रहते है. मानव शरीर में पृथ्वी, जल ,वायु और अग्नी के अतिरिक्त 'नफस' या 'अहं ' का भी समाहा है.इन तत्वों को सूफी लतीफ़ कहते है.भारतीय सूफी रचनाओं में इसका स्वरोप अन्यत्र दर्शनीय है,

सूफी कवि दृश्यमान जगत से परे परमतत्व की खोज में रहता है.इस जगत के ऊपर एक चिरंतन ,चतिन्य सता है जो भूत मात्र में परिव्याप्त शास्वत आत्मा है.सारी प्रकृती में परम सत्व को मानने की मतवाले सूफी कवी पूर्णतः भरातीय संस्कृति से प्रभावित थे.

सूफी प्रेमाख्यानों में नायिका के निवास स्थान के रूप में कैलास शब्द का प्रयोग दर्शनीय है.नायिका ही परम सत्या है उस परम सत्य तक पहूंचने के लिए ही न्याक कर्मरत होता है.यहाँ भी प्रकृती मुख्य भूमिका निभा रहे है.

"आगम्पूर कविलास मझारा ,फागुन झाई आनंद पसारा "

नूर मुहम्मद ,इन्द्रावती

"औ पिटा जो जगत कर ,छोड़ दीन्ह कैलास

लेने तिरिया के मेट ,नारद मिटा सुवास " कासिम्शाह , हन्स्जवाहिर

सूफी कवी परम मार्ग के पथिक थे .प्रेम के ज़रिये परमात्मा प्राप्ती की कामना करने वाले सूफी कवी उस प्रसंग में भी प्रकृति का सहारा लेते है,देखिये '

" प्रेम अग्नि मन में उदगारी ,तासों दारु बुद्धि कर जारी

प्रेम आग की बाधे ,मेघा भयो मलीन

सूर किरिन के आगे ,है मायां दुति हीन " नूर मुहम्मद , इन्द्रावती

चंद्रमा और चकोर ,सूर्या और कमल ,कमल और मधुकर की प्रीती की कहानी के ज़रिये जीवात्मा और परमात्मा की एकता को दिखाने की सूफी कवियोने के कोशिश पुरतः सफल रहा , यों मानने में कोई गलती नहीं है.

"कहाँ चाँद कहाँ रहहू चकोर ,प्रीत लाग चितवन तेहि ओरा

और अरविन्द रही जल माही ,रवि सेवत तेहि जोगे नाहोऊ

दादुर कंवल स्नेह न पावै ,बन सो मधुकर तेहि नित घावी "

नूर मुहम्मद इन्द्रावती

अरब देशों से भारत में आयी सूफी साधकों पर यहाँ के रीति रिवाजों का प्रभाव पढ़ना तो स्वाभाविक बात है.उनकी रचनाओं में प्रकृती को जितना महत्व मिटे है ,यह इसका दृष्टांत है.

वृक्षों से भारतीय नारी का भावात्मक संबध है.समर्पित भाव से वृक्षों की पूजा ,सेवा और संरक्षण प्रकृति को प्ररण युक्त बनायेंगे यह सन्देश सूफी कवियों ने भी अपनी रचनाओं के ज़रिये फैला रहे है.

सभी सूफी रचनाओं में वृक्षों को अपना साथी मानकर भावात्मक रूप से जी रहे पात्रों का चित्रीकरण किया गया है,तीज त्योहारों तथा धार्मिक अनुष्ठानों में तरह तरह के पेड़ों की पूजा और अर्चना करना उनके जीवन से जुडा हुआ है.

भारतीय पर्व परम्परा का बहुरंगी चित्र प्रकृती के सुन्दर पत पर अंकित हुआ है.श्रावणी के पर्व पर हरियाली और बादलों की भूमिका में झूला ,शरद की स्तबद्ध अमावस्या मीम दीपावली ,वसन्त के बहुरंगी पुष्पों से रंजित काल में होली ,आदी के रंगीन पर्वोंके आनंद और उत्साह का चित्रण करने में सूफी कवियों ने ज़्यादा ध्यान दिया है.सभ्यता के विकास के साथ लोग प्रकृती की और ज़्यादा ध्यान नही देंगे यह जान कर ही उनहोंने प्रकृती के साथ सजीव संपर्क के द्वारा पर्व एक स्वस्थ और स्वाभाविक जीवन की कलापूर्ण विधि को चित्रित किया

वसंत केवल ऋतू परिवर्तन नहीं है ,अपितु जीवन वह सर्वोत्तम क्षण है जिसकी परिणती होली में होती है.वसंत का वर्णन देखिये ,

"मंदिर मंदिर फुलवारी ,चोपा चन्दन वास

निस दिन रही बसंत तहें ,छवोऋतू बारह मॉस " .

पद्मावत के सिंहल द्वीप खंड में हीरामन सुआ रत्नसेन को पद्मावती से मिलनी की युक्ती बताते वक्त पंचमी की चर्चा करता है -

"माघ मास ,पछिल पछ लोग ,सीरी प्न्च्की हो इही आगे

उधारिही महादेव क्र बारां ,पूजिहीं आयी संकलन स्न्सान "

भारतीय जीवन का सबसे रंगीन त्यौहार होलिका दहन है.होली के सुअवसर में सभी भेद भाव भूल क्र लोग खुशियाँ मानता है.देखिये,

"आगम्पूर कविलास मझारा ,फागुन आई आनंद पसारा

एक दिस पुरुष एक दिस गोरी,हिलमिल गावही चांचर गोरी "

नूर मुहम्मद, इन्द्रावती

समस्त सृष्टी जल, वायु, अग्नी,पृथ्वी और आकाश तत्वों से बनाया है.जल की शीतलता,वायु का प्रवाह ,अग्नी का ताप,पृथ्वी का घंत्वा एवं आकाश की

अनुभूती हमें होते रहते है.प्रकृती ने हमारे देश को इतनी अधिक संपदा से भरा पूरा बनाया है. भारतीय आचार्यों ने इन पञ्च भूतों के आधार पर पेड़ों का वर्गीकरण किया है.उसका वर्णन सूफी रचनाओं में भी दर्शनीय है.गेहूं, बांस तथा तरुण आकाशा तत्व की प्रधान्तावाली वनस्पतियाँ है.वे अपना सर्वस्व दूसरों को देते है

वायु तत्व की प्रधान्तावाली वनस्पतियों में गुलमोहर ,केसिया, पलाश ,अमलतास ,कदम्ब जैसे वृक्ष आते है.सूफी रचनाओं में इनका वर्णन अन्यत्र हुआ है.यह इसकी सूचना दे रहा ही कि तट कालीन समाज के लोग जागरूक थे .कुछ पेड़ वायु को प्रदूषण करनेवाले है,उसको लगाने के विरुद्ध उपदेश भी कहीं कहीं मिल रहे है. अग्नि तत्व की प्रधान्तावाली पेड़ों में आम,आमला, कटहल आदि आते है.अपनी जीव रक्षा के पश्चात वे दुसरे प्राणियों के लिए खाद्य वास्तु बन रहे है.

अमलतास स्वास्थ्यवर्धक भी है जिसके कारण इसका प्रयोग अनेक दवाओं में होता है। मूलतः वनस्पति शास्त्र में अमलतास को 'औषधीय वृक्ष' के नाम से जाना जाता है। अमलतास का शाब्दिक अर्थ अम्लीय, क्षारीय प्रकृति वाला वृक्ष। क्षारीय प्रकृति होने के कारण अमलतास की छाल का उपयोग मुख्यतः चमड़ा-शोधन में किया जाता है। यूनानी दवाइयाँ बनाने के लिए अमलतास को बहुत उपयोग में लिया जाता है। इसका पाचन तंत्र पर बहुत ही अच्छा असर देखा गया है। अमलतास के बीज के आस-पास लगा गूदा पेट साफ़ करने के लिए दवा के रूप में प्रयोग में आता है। इसलिए जिन्हें कब्ज़ रहता है उन्हें इसके सेवन की सलाह दी जाती है। छोटे बच्चों को

अमलतास के बीज पीस कर दिए जाते हैं जिससे उनके पेट में हवा बनने की समस्या नहीं होती तथा हाज़मा भी ठीक रहता है। ऐसा भी माना जाता है कि यह शरीर में एकत्रित विषैले पदार्थों को निकालने में मदद करता है। यहाँ तक कि पेट के कीड़ों से निजात पाने के लिए भी अमलतास को उपयोग में लाया जाता है। अमलतास का गूदा पथरी, मधुमेह तथा दमे के लिए अचूक दवा के रूप में माना जाता है। यह एक अच्छा दर्द निवारक है साथ ही साथ रक्त शोधक के रूप में भी इसके सकारात्मक प्रभाव देखे गए हैं। त्वचा के लिए भी इसे उत्तम माना जाता है और त्वचा की जलन को कम करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता हैं। यह गर्मी में त्वचा की देखभाल के लिए अच्छा साबित हो सकता है। अमलतास की फलियों को चमत्कारिक गुणों से भरपूर माना जाता है। प्रायः अलसर, तेज़ बुखार, मलेरिया, पीलिया, कमज़ोरी एवं पेचिश जैसे रोगों में इनके प्रयोग गुणकारी सिद्ध हुए हैं। पुरानी मान्यता के अनुसार अमलतास की सूखी फली को यदि तकिए के नीचे रखकर सोया जाए तो बुरे, डरावने व दुखद स्वप्नों से मुक्ति मिलती है अतः भीरु प्रकृति के लोगों के लिए यह एक सफल टोटके की तरह सिद्ध हुआ है।

सूफी काव्यों में भात्रतीय धार्मिक ग्रंथों और उसके घटनाओं के बारे में सूचनाएं है. उसमे एक श्रीराम के पंचवटी वास का है.उसके बारे में अभी बही हुए अद्ध्यायाँ यह साबित करता है की पौराणिक लोग प्रकृती से मिलकर जीनेवाले थे. पंचवटी में शामिल पाँच वृक्षों-पीपल, बरगद, आँवला, बेल तथा अशोक- पर अलग-अलग शोध किया। शोध के बाद जो परिणाम आए वे बेहद चौंकाने

वाले थे। वैज्ञानिकों ने पाया कि पंचवटी के आस-पास रहने से बीमारियों की आशंका कम हो जाती है। शोध दल इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि पंचवटी में लगने वाले पौधों के अपने अलग-अलग लाभ हैं, इन वृक्षों अथवा इनके फलों से न केवल सामान्य से अलग वातावरण तैयार होता है, अपितु उससे मानव शरीर की प्रतिरोधक क्षमता भी बढ़ती है।

इस शोध में पाया गया कि पीपल का एक सामान्य वृक्ष १८०० कि.ग्रा. प्रति घंटे की दर से आक्सीजन उत्सर्जित करता है। बरगद का वृक्ष न केवल गर्मी को रोकता है अपितु प्राकृतिक वातानुकूलन का कार्य भी करता है। आँवले में पाया जाने वाला विटामिन "सी" जहाँ प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने का सबसे सस्ता उपाय है वहीं बेल का नियमित सेवन लोगों को पेट की बीमारियों से बचाए रखता है। अशोक के वृक्ष का उपयोग महिलाओं की कई बीमारियों से बचाने में किया जाता है। पंचवटी के पाँच वृक्षों में से हर एक को लगाने की अलग विधि है। कौन पेड़ किस दिशा में होगा तथा कितनी दूरी पर होगा, इसका भी वैज्ञानिक आधार है। पीपल का पेड़ पूरब दिशा में लगाने पर १८०० किलो. प्रति घंटा की दर से आक्सीजन का उत्सर्जन करता है। बरगद के पेड़ पश्चिम में लगाए जाने पर प्राकृतिक रूप से वातानुकूलन का कार्य अधिक सुचारुरूप से करता है। आँवला- दक्षिण में लगाया जाता है बेल उत्तर में तथा शोक- दक्षिण-पूर्व- में लगाए जाने पर स्वास्थ्यवर्धक सिद्ध होते हैं। पेड़ों के बीच १० मीटर की दूरी उचित होती है।

जल तत्व की प्रधान्तावाली वनस्पतियों में शतावरी,अनंत्मोल आदी आते है.नीम ,करील आदि पृथिवी तत्व की प्रधान्तावाली वनस्पतियाँ है .सूफी काव्यों से गुज़र्नेवालों को ऐसे ढेर सारे बातों का जिक्र मिलंगे.काव्यों के अंतर्गत कुछ महीनों में अमुक फल न खाने की और अमूम पेड होने पर अमुक फल न खाने कि सूचना दिया है.वह इस वर्गीकरान्न के आधार पर ही दिया है.मिसाल के रूप में नूर मुहम्मद जी के ' इन्द्रावती ' ले सकते है.उसमें एक पूरा अद्ध्याय औषधि खंड रखा है .

' पित्त बधाई तो औखत पावें ,चन्दन और गुलाब मिटावै

जो मारुत तन दुःख उप्जावाई ,मृगमद केसर ताही नसावै"

नूर मुहम्मद इन्द्रावती

जब से मनुष्य ने धरती पर जन्म लिया, उसके मन में वनस्पति के प्रति एक विशेष मोह, आकर्षण और श्रद्धा थी। बिना किसी कारण पेड़ या झाड़ियाँ काटना न सिर्फ एक अपराध माना जाता था, बल्कि एक निर्दय आस्थाहीन कार्य भी।पेड़ों और वनस्पतियों के प्रति प्रेम और श्रद्धा को मात्र अंधविश्वास मानना उचित नहीं। मानव ने अपने आविर्भाव के समय से ही देख लिया था कि संपूर्ण सृष्टि एक जंजीर है, जिसकी कड़ियाँ है मनुष्य, पशु-पक्षी, वनस्पति, नदियाँ, पर्वत और अन्य सभी वस्तुएँ जो प्रकृति में विद्यमान हैं।

इस विचार को धक्का लगा सत्रहवीं शताब्दी में औद्योगिक क्रांति के जन्म से। जहां इस क्रांति ने मनुष्य को तकनीकी ज्ञान और शक्ति उपलब्ध करायी, वहीं उसके मन से प्रकृति के प्रति श्रद्धा और आदर की भावना को भी कम कर दिया। धीरे-धीरे -- जैसे-जैसे तथाकथित सभ्यता का विकास हुआ, वन और वनस्पति मात्र दोहन का साधन बन गयी। आज हाल यह है कि वन प्राय: लुप्त हो गये हैं, हजारों प्रकार की वनस्पतियाँ सदा के लिए समाप्त हो गयीं हैं, और वन और जीवन से संबंधित जीव-प्रणाली बुरी तरह अस्त-व्यस्त हो गयी हैं। फल है अनावृष्टि, अतिवृष्टि, मौसमों का बदलाव, भूस्खलन, रेगिस्तानों का बढ़ना आदि। सूफी कवी अपनी रचनाओं के प्रकृति वर्णन से यही आशा रखते है की मनुष्य अपनी 'सभ्यता' का लबादा उतार फैकेगा और अपने पूर्वजों की गौरवमय परंपरा को फिर से अपनाएगा, ताकि वन और वनस्पतियाँ जीवन प्रणाली को फिर से सुचारू रूप से स्थापित कर सकें।

सूफी काव्यों में अनेक प्रकार के लोकगीत उपलब्द्ध है.प्रत्येक ऋतुओं को आधार बनाकर रचनाएं की गयी है.भारत में बारह मॉस विशेष प्रसिद्ध् है.सूफ्यी कवी भी इसकी और आकृष्ट हुए थे.महा पंडित राहुल सांकृत्यायन ने मालिक मुहम्मद

जायसी को इसकी समाविश्ती के लिए मुक्त कंठ प्रशंसा दी है.प्रत्येक ऋतुओं में गानेवाले रिऊ गीत की सूचनाएं भी सूफी रचनाओं में दर्शनीय है.

सूफी कवियों ने प्रतीकों के रूप में प्रकृती का सम्यक प्रयोग किया है .उन के लिए समुद्र सदैव प्रेम का प्रतीक है . इन्द्रावती में माया के विविध स्वरूपों को वनों के प्रतीक से चित्रित किया है .साधक के पथ पर बाधा उपस्थित करने वाले वस्तुओं के रूप में पर्व,वन ,जैसे तत्वों को ही दिखाया है ..प्रकृती और मानव का अटूट संबंध ही यहाँ दृष्टि गोचर हो रहे है .तिल को एकत्व के प्रतीक मानने से किसान और प्रकृती. की रिश्ते का भी वर्णन सूफी कवी कर रहे हैं . .जीवात्मा और परमात्मा के संबंध को सूचित कराने के लिए सूफी कवियों ने प्रकृते से ही कई प्रतीकों को चुना है-जैसे कमल और सूर्या,चंदमा और चकोर ,दीपक एवं पतंग ,गुलाब और भ्रमर ,राग और हिरन,बूँद और समुद्र,सूर्य और किरण आदि.उस समय के समाज प्रकृती के प्रत्येक हल चल के प्रति कितने जागरूक थे इसका मिसाल यहाँ मिल रहे है

सूफी कवी, ख़ास कर हिन्दी सूफी कवी प्रकृती के प्रति ध्यान देने वाले थे ..उनको यह प्रेरणा तत्कालीन समाज से ही मिले थे.प्रकृती और समाज के मिलन से जो सुख हमें मिलेंगे इसकी सूचना ही सूफी काव्यों से मिल रहे है .आज हम प्रकृति से दूर होकर जीने की सज़ा भोग रहे है.पाश्चात्य संस्कृति की और हम आकृष्ट होकर अपनी संस्कृति भूल रहे है. अपनी संस्कृति की और वापस जाने का उसकी खूबियों का अद्ध्ययन करने का मौक़ा सूफी कवी दे रहे है .

सूफी रचनाओं में पशुओं और पक्षियों की रक्षा हेतु किये गए उपचारों की सूचनाये भी दर्शनीय हैभारतीय सभी देवताओं के वाहन के रूप में किसी न किसी पशु . सूफ .या पक्षी को मान रहे हैी कवी भी इसका वर्णन किया हैयह भी यही तत्व . वृक्षों और जीव जालों को .दिखाता है कि यों करने से पर्यावरण की रक्षा हो जायेंगे देवत्व वे इसलिए प्रदान किये थे कि उस प्रकार उनके रक्षा हो जायेंगे.

हम अपने आप को विद्वान् और अपने युग को वैज्ञानिक युग मान रहे है.मगर पर्यावरण की दृष्टी से देखने पर यह बात शेई नहीं है,यों कहने में कोई गलती नहीं है.हम अपने पूर्वजों को अंध विश्वासी और पेड़ों के उपासक मानकर खिल्ली उठाते है ..मगर वह उस प्रकार क्यों बने इसके बारे में सोचता तक नहीं .बरगद ,पीपल ,पारस पीपल ,पाकर और गूलर को भारतीय ' पंच्वात्कल ' कहकर पुकारते थे भारतीय मनीषियों से सूचना पाकर सूफी कवियों ने प्रदूषण तथा प्राकृतिक आपदाओं से बचने के उपाय के रूप में इसका वर्णन किया है. इन पेड़ों से प्रावाहित होने वाली वायु सर्वाधिक उत्तम प्राण वायु है ,यह तत्व समझ कर ही वे ऐसे करते थे.मगर यह तत्व न मानने वाले हम तो अंग्रेजी प्रभाव के कारण उनको नीच समझ रहे है.सूफी कवे यह पूछ रहे है ,क्या यह सही तरीका है ?सूफियों को तत्कालीन आचार्यों से सहस्रों वनस्पतियों के पंचाग (फूल,पत्ते ,फल ,चाल और जड़ों) का सूचना मिला है , उनको किसी न किसी प्रकार रचनाओं में दिखाया है .

प्राचीन काल से ही मानव फल -फूल देनेवाली सस्यों को कलात्मक ढंग से लगा रहे थे.सूफी रचनाओं में विभिन्न गधों के वर्णन करते वक्त वहां वन- उप वनों के बारे में सूचना दिया गया है.उनसे मानव के लिए नैसर्गिक आनंद का प्रवाह मिलने के रूप में भी चित्रित किया है.पशु -पक्षी और मानव को इसका सौभाग्य भोगने का मौक़ा मिलते थे.और उनमें अनजाने से ही भ्रातृत्व की भावना जाग उठते थे.कई प्राकृतिक आपदाओं से मानव बच जाने की सूचनाये सूफी रचनाओं में है.उनको यह सूचना अपने पर्यावरण से ही मिले थे.उसमे होने वाले हर परिवर्तन पर वे ध्यान देते थे.जैसे अब अंडमान निकोबार द्वीपों के आदिवासी लोग सुनामी से बचे थे,उसी प्रकार तत्कालीन समाज के लोग बिना किसी वैज्ञानिक उपायों से अपने जान बचे थे,अब वह क्षमता हमें नहीं है.क्योंकी हम प्रकृती से दूर हो चुके है .

आजकल के लोगों की धारणा है कि प्रकृति के अन्तर्गत जगत् का केवल वही भाग आता है, जो भौतिक स्तर पर अभिव्यक्त है । साधारणतः जिसे मन समझा जाता है, उसे प्रकृति के अन्तर्गत नहीं मानते । इच्छा की स्वतन्त्रता सिद्ध करने के प्रयास में दार्शनिकों ने मन को प्रकृति से बाहर माना है । क्योंकि जब प्रकृति कठोर और दृढ़ नियम से बँधी और शासित है तब मन को यदि प्रकृति के अन्तर्गत माना जाय, तो वह भी नियमों में बँधा होना चाहिए । इस प्रकार के दावे से इच्छा की स्वतन्त्रता का सिद्धान्त ध्वस्त हो जाता है, क्योंकि जो नियम में बँधा है, वह स्वतन्त्र कैसे हो सकता है? भारतीय दार्शनिकों का मत इसके विपरीत है । उनका मत है कि सभी भौतिक जीवन, चाहे वह व्यक्त हो अथवा अव्यक्त, नियम से आबद्ध है । उनका

दावा है कि मन तथा बाह्य प्रकृति दोनों नियम से, एक तथा समान नियम से आबद्ध हैं । यदि मन नियम के बंधन में नहीं है, हम जो विचार करते हैं, वे यदि पूर्व विचारों के परिणाम नहीं हैं, यदि एक मानसिक अवस्था दूसरी पूर्वावस्था के परिणामस्वरूप उसके बाद ही नहीं आती, तब मन तर्कशून्य होगा, और तब कौन कह सकेगा कि इच्छा स्वतन्त्र है और साथ ही तर्क या बुद्धिसंगतता के व्यापार को अस्वीकार करेगा? और दूसरी ओर, कौन मान सकता है कि मन कारणता के नियम से शासित होता है और साथ ही दावा कर सकता है कि इच्छा स्वतन्त्र है?

नियम स्वयं कार्यकरण का व्यापार है । कुछ पूर्व घटित कार्यों के अनुसार - कुछ परवर्ती कार्य होते हैं । प्रत्येक पूर्ववर्ती का पना अनुवर्ती होता है । प्रकृति में ऐसा ही होता है । यदि नियम की यह क्रिया मन में होती है, तो मन आबद्ध है और इसलिए वह स्वतन्त्र नहीं है । नहीं, इच्छा स्वतन्त्र नहीं है । हो भी कैसे सकती है? किन्तु हम सभी जानते हैं, हम सभी अनुभव करते हैं कि हम स्वतन्त्र हैं । यदि हम मुक्त न हों, तो जीवन का कोई अर्थ ही नहीं रह जायेगा और न वह जीने लायक ही होगा । प्राच्य दार्शनिकों ने इस मत को स्वीकार किया, अथवा यों कहो कि इसका प्रतिपादन किया कि मन तथा इच्छा देश, काल एवं निमित्त के अन्तर्गत ठीक उसी प्रकार है, जैसे तथाकथित जड़ पदार्थ हैं । अतएव, वे कारणता की नियम में आबद्ध है । हम काल में सोचते हैं, हमारे विचार काल में आबद्ध हैं, जो कुछ है, उन सबका अस्तित्व देश और काल में है । सब कुछ कारणता के नियम से आबद्ध है । इस

तरह जिन्हें हम जड़ पदार्थ और मन कहते हैं, वे दोनों एक ही वस्तु है । अन्तर केवल स्पंदन की मात्रा में है । अत्यल्प गति से स्पंदनशील मन को जड़ पदार्थ के रूप में जाना जाता है । जड़ पदार्थ में जब स्पंदन की मात्रा का क्रम अधिक होता है, तो उसे मन के रूप में जाना जाता है । दोनों एक ही वस्तु है, और इसलिए अब जड़ पदार्थ देश, काल तथा निमित्त के बंधन में है, तब मन भी उच्च स्पंदनशील जड़ वस्तु है ।

प्रकृति एकरस है । विविधता अभिव्यक्ति में है । 'नेचर' के लिए संस्कृत शब्द है प्रकृति, जिसका व्युत्पत्त्यात्मक अर्थ है विभेद । सब कुछ एक ही तत्व है, लेकिन वह विविध रूपों में अभिव्यक्त हुआ है । मन जड़ पदार्थ बन जाता है और फिर क्रमानुसार जड़ पदार्थ मन बन जाता है । यह केवल स्पंदन की बात है । इसपात का एक छड़ लो और उसे इतनी पर्याप्त शक्ति से आघात करो, जिससे उसमें कम्पन आरम्भ हो जाय । तब क्या घटित होगा? यदि ऐसा किसी अँधेरे कमरे में किया जाय तो जिस पहली चीज का तुमको अनुभव होगा, वह होगी ध्वनि, भनभनाहट की ध्वनि । शक्ति की मात्रा बढ़ा दो, तो इसपात का छड़ प्रकाशमान हो उठेगा तथा उसे और अधिक बढ़ाओ, तो इसपात बिल्कुल लुप्त हो जायेगा । वह मन बन जायेगा । एक अन्य दृष्टान्त लोयदि मैं दस दिनों - तक निराहार रहूँ, तो मैं सोच न सकूँगा । मन में भूलेभटके-, इनेगिने विचार आ जायेंगे । मैं बहुत अशक्त हो जाऊँगा और शायद - अपना नाम भी न जान सकूँगा । तब मैं थोड़ी रोटी खा लूँ, तो कुछ ही क्षणों में सोचने लगूँगा । मेरी मन की शक्ति लौट आयेगी । रोटी मन बन गयी । इसी प्रकार

मन अपने स्पंदन की मात्रा कम कर देता है और शरीर में अपने को अभिव्यक्त करता है, तो जड़ पदार्थ बन जाता है ।

इनमें पहले कौन हुआजड़ वस्तु या मन -, इसे मैं सोदाहरण बताता हूँ । एक मुरगी अंडा देती । अंडे से एक और मुरगी पैदा होती है और फिर इस क्रम की अनन्त श्रृंखला बन जाती है । अब प्रश्न उठता है कि पहले कौन हुआ, अंडा या मुरगी? तुम किसी ऐसे अंडे की कल्पना नहीं कर सकते, जिसे किसी मुरगी ने न दिया हो और न किसी मुरगी की कल्पना कर सकते हो, जो अंडे से न पैदा हुई हो । कौन पहले हुआ, इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता । करीब करीब हमारे सभी विचार मुरगी और अंडे के गोरखधंधे जैसे हैं । अत्यन्त सरल होने के कारण महान् से महान् सत्य विस्मृत हो गये । महान् सत्य इसलिए सरल होते हैं कि उनकी सार्वभौमिक उपयोगिता होती है । सत्य स्वयं सदैव सरल होता है ।

मनुष्य में स्वतन्त्र कर्ता मन नहीं है, क्योंकि वह तो आबद्ध है । वहाँ स्वतन्त्रता नहीं है । मनुष्य मन नहीं है, वह आत्मा है । आत्मा नित्य मुक्त, असीम और शाश्वत है । मनुष्य की मुक्ति इसी आत्मा में है । आत्मा नित्य मुक्त है, किन्तु मन अपनी ही क्षणिक तंरगों से तद्रूपता स्थापित कर आत्मा को अपने से ओझल कर देता है और देश, काल तथा निमित्त की भूलभुलैया माया में खो जाता है । हमारे - बंधन का कारण यही है । हम लोग सदा मन से तथा मन के क्रियात्मक परिवर्तनों से अपना तादात्म्य कर लेते हैं । मनुष्य का स्वतन्त्र आत्मा में प्रतिष्ठित है और मन

के बंधन के बावजूद आत्मा अपनी मुक्ति को समझते हुए बराबर इस तथ्य पर बल देती रहती है, 'मैं मुक्त हूँ मैं हूँ !, जो मैं हूँ मैं हूँ !, जो मैं हूँ !' यह हमारी मुक्ति है । आत्मानित्य मुक्त-, असीम और शाश्वतयुग युग से अपने उपकरण मन के माध्यम - सेअपने को अधिकाधिक अभिव्यक्त करती आयी है । तब प्रकृति से मानव का क्या सम्बन्ध हैनिकृष्टतम प्राणियों से लेकर मनुष्यपर्यन्त आत्मा प्रकृति के माध्यम से / अपने को अभिव्यक्त करती है व्यक्त जीवन के निकृष्टतम रूप में भी आत्मा की उच्चतम अभिव्यक्ति अंतर्भूत है और विकास कही जानेवाली प्रक्रिया के माध्यम से वह बाहर प्रकट होने का उद्योग कर रही है ।

विकास की सभी प्रक्रिया अपने को अभिव्यक्त करने के निमित्त आत्मा का संघर्ष है । प्रकृति के विरूद्ध यह निरंतर चलते रहनेवाला संघर्ष है । मनुष्य आज जैसा है, वह प्रकृति से अपनी तद्रूपता का नहीं, वरन् उससे अपने संघर्ष का परिणाम है । हम यह बहुत सुनते हैं कि हमें प्रकृति के साथ सामंजस्य करके और उससे समस्वरित होकर रहना चाहिए । यह भूल है । यह मेज, यह घड़ा, खनिज पदार्थ, वृक्ष सभी का प्रकृति से सामंजस्य है । पूरा सामजस्य है, कोई वैषम्य नहीं । प्रकृति से सामंजस्य का अर्थ है गतिरोध, मृत्यु । आदमी ने यह घर कैसे बनाया? प्रकृति से समन्वित होकर? नहीं । प्रकृति से लड़कर बनाया । मानवीय प्रगति प्रकृति के साथ सतत संघर्ष से निर्मित हुई है, उसके अनुसरण द्वारा नहीं । सूफी कवी अपनी रचनाओं से उस सुनहले युग की सूचनाएं दे रहे है.

उपसंहार

साहित्य का भूगोल बहुत विशाल है। इसे न तो किसी सीमा में बाँधना उचित कहा जाएगा और न ही कालखंड में समेटना, रचनात्मक प्रवृत्तियाँ और सृजन धर्म हमेशा सर्वोपरि महत्त्व रखता है और यही वह कारण है जो समाज और परिवेश को युगों और सदियों तक जीवन्त बनाये रखते हुए यादगार रहता है। सृजन धर्म का निर्वाह सभी लोग करते हैं लेकिन यादगार वे ही साबित हो पाते हैं जो जनोम्मुखी और सार्वजनीन उपयोग के हुआ करते हैं। यही कारण है कि स्मृतियों के कैनवास पर वे लोग आज भी सुनहरी मुस्कराहट बिखेरते हुए देखे जा सकते हैं जिन्होंने अतीत में लोकहित के ऐसे-ऐसे काम किये हैं जिन्हांेने समाज और क्षेत्र का भूगोल बदल कर नया इतिहास रच दिया. हिन्दी साहित्य के स्वर्ण युग के रूप में विख्यात सूफी कवी भी इसी श्रेणी में आते है.

मनुष्य, पशुपक्षियों-, प्रकृति और परिवेशीय हलचलों का पारस्परिक गहन संबंध तभी से रहा है जब से पंचतत्वों से सृष्टि का आविर्भाव हुआ है। इन सभी के जीवन से जुड़े व्यवहारों में भी न्यूनाधिक रूप से प्रभाव सभी में परिलक्षित होता है।कभी अच्छा तो कभी बुरा स्वभाव इन सभी को भीतर तक प्रभावित करता है और इसी आधार पर इनमें गुणदोषों की रचना हो जाती है जो जींस में आकर पीढ़ियों तक - चलती है।इन्हीं संबंधों के बारे में सबसे पहले भारतीय आचार्य और उनसे प्रभावित होकर भारतीय सूफी कवियों ने किया.

भारतीय संस्कृति में सामाजिक व्यवस्था का संचालन सरकारी कानून से नहीं बल्कि प्रचलित नियमों जिसे 'धर्म' के नाम से जाना जाता था, के द्वारा होता था। धर्म ही वह आधार था जो समाज को संयुक्त एवं एक करता था तथा विभिन्न वर्गों में सामंजस्य एवं एकता के लिए कर्तव्य-संहिता का निर्धारण करता था।

राष्ट्रधर्म के बारे में प्रचलित शास्त्रोक्त कहावत् -' जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" के अंर्तगत जननी और जन्मभूमि को स्वर्ग से भी बढकर बताया गया है। अपनी देश को प्यार करनेवाले और अपने देश के लिए प्राणत्याग करने तक तैयार रहनेवाले भारतीयों से अशांती की बीच में से आयी सूफी साधक को प्यार लगना तो स्वाभाविक बात है.जो प्यार का अनुभव उनको भारत से मिला उसी को प्रेममार्ग के ज़रिये सूफी कवियों ने भारत माँ की चरण कमलों में अर्पण किया.

यदि हम पर्यावरण को बिगाड़ेंगे तो प्रकृति हमें कदापि क्षमा नहीं करेगी। हमें प्रकृति के प्रकोप का भाजन बनना पड़ेगा। यह प्रकोप चाहे अतिवृष्टि हो, चाहे अनावृष्टि, चाहे भूकंप चाहे जल-प्रलय या अन्य विनाशलीला। विगत जाते-जाते कुपित प्रकृति का तांडव कर गया। प्रकृति के साथ हमारे मधुर संबंध हो। हम प्रकृति का शोषण न करें। हम सब संकल्पित हों इस प्रार्थना के लिए -

'मधुवाता ऋतायते मधुक्षरंति सिंधव:

माध्वीर्न: संत्वोषधी:। मधु नक्तमुतोषसो

मधुमत्पार्थिव रज:। मधु: द्यौरस्तु न: पिता।'

मधुर वायु हमारे लिए संचरण करें, नदियों में मधुर जल भरा रहे। सभी औषधियाँ मधुरता से युक्त हों। रात और दिन मधुर हों, पृथ्वी का अणुमात्र भूमिकण मधुरता से युक्त हो। अंतरिक्ष हमारे लिए माधुर्यपूर्ण हो।

भारत की संस्कृति विश्व संस्कृति है। यह करोड़ों वर्ष से मानवता का दिग्दर्शन करती आयी है। संस्कृतियाँ कभी अनेक नहीं होती, अपितु संस्कृति सदा एक ही होती है। चूँकि संस्कृति धर्म-प्रेरित होती है। जैसे मनुष्य का धर्म मानवता एक है, उसी प्रकार उसकी संस्कृति भी सदा एक (मानव संस्कृति) ही रहती है। सभ्यता सभ्य समाज का निर्माण करती है। जबकि संस्कृति और भी उत्कृष्ट सुसंस्कृत समाज का निर्माण करती है।

समय की सदियों पुरानी अवधारणा से हम सभी परिचित हैं लेकिन उसका दार्शनिक या वैज्ञानिक विवेचन विरोधाभासी चिंतन का सूत्रपात करता है। विज्ञान विशेषकर सापेक्षवाद किसी विशेष समयावधि को अंतरिक्ष की दूरी के समान नापता है। वह उसे 'चतुर्थ आयाम' कहता है। लंबाई, चौड़ाई, ऊंचाई शेष तीन आयाम है। पर कुछ दार्शनिक इस अवधारणा से असहमत है। उनका कहना है, चतुर्थ आयाम में इस

तरह अग्रसर होने का अर्थ होगा कि भविष्य पूर्व निर्धारित है और 'स्वतंत्र इच्छा' द्वारा उसमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

समय तो समय है - काल! वेदांत के परब्रह्म की तरह सर्वव्यापी, आदि-अंत से शून्य। विष्णु पुराण में तो काल को ब्रह्म का रूप ही माना गया है। हारीत के अनुसार, काल तीन प्रकार का जानना चाहिए - अतीत(भूत), आगत(भविष्य) और वर्तमान! काल सर्वत्र व्याप्त है। वह लोक की, जगत की, विश्व की गणना करता है, इसीलिए काल कहलाता है। वह परमेश्वर है। उसका अतिक्रमण कोई नहीं कर सकता।

लेकिन जिस तरह हमने परब्रह्म को निराकार, सर्वव्यापी मानकर उसे अपनी मानसिक संतुष्टि के लिए तरह-तरह के विग्रहों में ढाल लिया है, उसी तरह शायद हमने समय को, काल को भी पल से लेकर शती तक में तो विभाजित कर दिया है।

भारतीय संस्कृति की तमाम परंपराएं वैज्ञानिकता की कसौटी पर इतनी खरी और ऋषि-मुनियों द्वारा परखी हुई हैं कि जब तक उनका अवलम्बन होता रहेगा, तब तक मानवी सृष्टि को किसी भी बाहरी आपदाओं का सामना नहीं करना पड़ेगा। बात धार्मिक, आध्यात्मिक, सामाजिक और साँस्कृतिक परम्पराओं से लेकर उन सभी अच्छी धाराओं की है जो सदियों और युगों से हमारे जनजीवन को आनंदित और उल्लसित करती चली आ रही हैं।इन परम्पराओं से हमारे समुदाय और परिवेशीय सामाजिकबानों को मजबूती मिलती है व सामू-आर्थिक तानों-हिक सोच की भावना के

साथ निरन्तर आगे बढ़ते रहने की भावनाएं प्रबल होती हैं।जीवन में सरसता, समरसता और आह्लाद बरसाने वाली ये परंपराएं ही हैं जो हमें उन सभी लोगों से पृथक करती हैं जिनका विश्वास न घरपरिवार में रहा है न कुटुम्ब में।-

अब हमारे सामने परंपराओं की जीवनीशक्ति का अभाव होने लगा है और हम उस वृक्ष के नीचे आ खड़े हुए हैं जिसकी जड़ों को हम अपनी क्रूर दाढ़ों से चबा चुके हैं और नीचे खड़े होकर रोते हुए यह प्रार्थना करने लगे हैं कि कभी कोई जोर की आँधी न आए ताकि हम सही सलामत रहें। परम्पराओं की हत्याओं का मतलब है हमारी पीढ़ियों की हत्या, हमारे पूरे सामाजिक ढाँचे का निर्मम कत्ल, और उन सभी मूल्यों का अंत जिनकी बदौलत मनु से चली परंपरा आज भी बरकरार है।

शैशव में संस्कारों के अभाव की वजह से इनका पूरा ध्यान उसी तरह गया है जिस तरफ पैसों और भोगविलासिता- की जबरदस्त चकाचौंध व्याप्त है। अब यौवन या अधेड़ावस्था तक पहुंचतेपहुंचते चकाचौंधी चमक के पक्की पड़ जाने के बाद इनमें - कोई ग्राह्यता शेष नहीं रह गई है कि कोई संस्कार सीख या अपना सकें।

हमारा जीवन सिर्फ अपनी आत्मा और शरीर से ही संबंध नहीं रखता है बल्कि हमारे आसपास रहने वाले लोग और परिवेशीय हलचलें भी हमारे - जीवन से जुड़े कई महत्त्वपूर्ण पहलुओं में निर्णायक साबित होती हैं और इन्हीं के आधार पर हमारे समग्र व्यक्तित्व का निर्माण होता है।जीवन के लक्ष्य को जानने और आगे बढ़ने के लिए जरूरी है कि सकारात्मक चिंतन किया जाए और उसी के अनुरूप

आगे बढ़ा जाए ताकि जीवन में स्थायी, शाश्वत शांति और आत्मीय सुकून प्राप्त हो तथा यह जीवन और आने वाला जीवन भी सुधर सके। वरना तो वह सब होना ही है जो होने वाला है।

धर्म धारण करने का विषय है, प्रचार-प्रसार का नहीं। धर्म का मूल मर्म लोकोपकारी जीवनयापन और ऊर्ध्वगामी यात्रा से पूर्व अधिकाधिक पुण्य संचय का है।भारतीय यही धारणा रखनेवाले थे.इसलिए ही पहले धर्म का नाम सुनते ही आत्मशांति, अन्दरूनी मस्ती, ईश्वर के सामीप्य और दिव्यता का अहसास आदि सब कुछ हुआ करता था.पर बीच कहीं से धर्म उसके ठीक पथ से अलग होकर चलने लगे .धर्म का मतलब रह गया है कानफोड़ू शोर, धंधा, पाखण्ड, आडम्बर। कभी प्रसाद के नाम पर तो कभी ईश्वर की कृपा पाने के नाम पर लूट-खसोट आदि का बिजनैस होता जा रहा है।

धर्म के नाम पर वो सब कुछ चल रहा है जिसकी ईश्वर कभी ईजाजत नहीं देता। धर्म का चौला पहन कर आजकल लोग कुछ भी करने को स्वतंत्र और स्वच्छन्द हैं। कलिकाल का पूरा असर धर्म पर छा गया है तभी तो धर्म भी गरीबों और अमीरों में भेद करने लगा है। धर्म का अर्थ यह है कि हर किसी व्यक्ति को पूजा-अर्चना, दर्शन आदि का समान अधिकार है चाहे वह सम्पन्न हो अथवा विपन्न। जो सन्देश भारतीय मनीषियों ने अपने सालों के अथक श्रम के कारण समझ कर सूना रहे थे ,उसी को सूफी कवी अपनी रचनाओं के माद्ध्यम से सुनाना

चाहा.उनकी प्रेममयी बातें और प्रेमी रूप उनको भारत में सफलता मिलने का कारण बना.

हरियाली भरा परिवेश तन-मन को सुकून देने के साथ ही जीवन के हर पहलू में सुख-समृद्धि लाता है। पानी और हरियाली का अपना अलग ही आकर्षण है। जो इन्हें देखता है उसे तत्क्षण सुकून व आत्मतोष मिलने लगता है।

हरियाली भरे परिवेश में जीवन को आनंद देने वाले रंगों और रसों की भरमार हुआ करती है। आज हमारे जीवन में रसहीनता, गंधहीनता और जड़ता आ गई है उसका मूल कारण ही यह है कि हम नैसर्गिक रसों के अखूट भण्डार से दूर होते चले जा रहे हैं। जिस तेजी से ये दूरियाँ बढ़ती जा रही हैं उतना ही हमारा जीवन नीरस होता जा रहा है।

हरियाली प्राणी मात्र को प्रिय होती हैं चाहे वह पशु हो या इंसान। हरियाली जहाँ सुकून देती है वहीं जबर्दस्त आकर्षण भी जगाती है। किसी भी भवन की शाश्वत सुंदरता उसके आस-पास के हरियाले परिसरों से प्रतिबिम्बित होती है। यह हरियाली भरे परिवेश की सघनता और बेहतर विन्यसन पर निर्भर करती हैं।

भारतीय संस्कृति की खासियत भी हरियाली ही हैसिंध नदी तट से उद्भूत . भारतीय संस्कृति पूर्णतःप्रकृती पर आस्था रखनेवाले थेसभी भारतीया धर्म ग्रन्थ . अरब देशों की गर्मी से भिन्न .प्रकृती और मानव के अटूट रिश्ते पर बल देनवाले है

देशों की गर्मी सहते हुए यहाँ आये सूफी साधकों को यहाँ की हरियाली और यहाँ की प्रकृति उपासना अचा लगना स्वाभाविक बात हैअपने पूर्वजों की बातों को भार.तीय सूफी कवियों ने भी अपनी रचनाओं के ज़रिये सुनाना चाहाप्रकृती और मानव के . अटूट रिश्ते का झलक उन रचनाओं में भी दर्शनीय है.

वैज्ञानिक आध्यात्मवाद को समझने के लिए हमें इस तथ्य पर ध्यान देना होगा कि हमारे समक्ष जो विश्व ब्रह्माण्ड है, वह मूलतः दो सत्ताओं से मिलकर बना है- एक जड़ व दूसरा चेतन। जड़ सत्ता अर्थात् पदार्थ का अध्ययन विज्ञान का विषय है जबकि चेतन सत्ता (आत्मा-परमात्माश् का अध्ययन अध्यात्म का विषय है। अतः इस ब्रह्माण्ड को पूरे तौर से समझने के लिए हमें इन दोनों ही सत्ताओं को ध्यान में रखना होगा।

भारतवर्ष में अध्यात्म और विज्ञान का सदा से समन्वय रहा है। वेद एवं वैदिक वाग्म्य विज्ञान और अध्यात्म को साथ-साथ लेकर चलते हैं, फिर चाहे आयुर्वेद हो अथवा वास्तु। पश्चिमी देशों में भी एक लम्बे अर्से तक विज्ञान एवं अध्यात्म साथ-साथ रहे। प्रत्येक वैज्ञानिक ग्रन्थ में परमात्मा की चर्चा पाई जाती थी। सर आइजेक न्यूटन ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'प्रिन्सपिया' में परमात्मा की चर्चा करते हुए लिखा है कि परमात्मा ने इस ब्रह्माण्ड की रचना की और इसे एक संवेग प्रदान किया, जिसके कारण वह गतिशील है। उन्होंने यह भी लिखा कि ब्रह्माण्डरूपी नाटक के मंच पर जब कोई विकृति पैदा होती है, तो परमात्मा स्वयं उसे ठीक करता है।

सनातन पद्धति कहती है कि ईश्वर माँ है|सूदी कवियों ने भी यही आशय अपनाए है .माँ का अर्थ केवल वह स्त्री नहीं जिसने हमें जन्म दिया है| माँ तो वह है जिससे हमारी उत्पत्ति हुई है| जिस स्त्री ने नौ मास मुझे अपनी कोख में रखा व उसके बाद असहनीय पीड़ा सहकर मुझे जन्म दिया वह स्त्री मेरी माँ है, जिस स्त्री ने मुझे पाला मेरी दाई, मेरी दादी, मेरी नानी, मेरी चाची, मेरी ताई, मेरी मासी, मेरी बुआ, मेरी मामी, मेरी बहन, मेरी भाभी ये सब मेरी माँ है, जिस पुरुष ने मुझे जन्म दिया वह पिता मेरी माँ है, मेरे गुरु, मेरे आचार्य, मेरे शिक्षक जिन्होंने मुझे ज्ञान दिया वे सब मेरी माँ हैं, जिस मिट्टी में खेलते हुए मेरा बचपन बीता वह मिट्टी मेरी माँ है, जिन खेतों ने अपनी फसलों से मेरा पेट भरा वह भूमि मेरी माँ है, जिस नदी ने अपने जल से मेरी प्यास बुझाई वह नदी मेरी माँ है, जिस वायु में मै सांस ले रहा हूँ वह वायु मेरी माँ है, जिन औषधियों ने मेरी प्राण रक्षा की वे सब जड़ी बूटियाँ मेरी माँ हैं, जिस गाय का मैंने दूध पिया वह गाय मेरी माँ है, जिन पेड़ों के फल मैंने खाए, जिनकी छाँव में मैंने गर्मी से राहत पायी वे पेड़ मेरी माँ हैं, वे बादल जो मुझ पर जल वर्षा करते हैं वे बादल मेरी माँ है, वह पर्वत जो मेरे देश की सीमाओं की रक्षा कर रहा है वह पर्वत मेरी माँ है, यह आकाश जिसे मैंने ओढ़ रखा है वह भी मेरी माँ है, वह सूर्य जो मुझे शीत से बचाता है, अंधकार मिटाता है वह अग्नि मेरी माँ है, वह चन्द्रमा जो मुझ पर शीतल अमृत बरसाता है वह चंदा मामा मेरी माँ है, वह शिक्षा जिसे मैंने पढ़कर उन्नति की, वह विद्या मेरी माँ है, वह धन जिससे मैंने अपना भरण पोषण किया वह मेरी माँ है, आपकी माँ भी मेरी माँ है, वह सभ्यता, संस्कृति, परंपरा, जीवन पद्धति,

जीवन मूल्य जिनमे मेरा जीवन बीत रहा है ये सब मेरी माँ हैं| मेरे पूर्वज जिन्होंने मेरे कुल को जन्म दिया वे ◌ु रखे मेरी माँ हैं, वे शूरवीर जिन्होंने मेरी रक्षा में अपने प्राणों की आहुति दी वे सब मेरी माँ हैं| इन सबसे मेरी उत्पत्ति हुई है अत: ये सब मेरी माँ हैं|

प्रकृति ने हमें जन्म दिया हैं . जब यह हमारी माँ है और हम मानते हैं कि हमारी माँ ईश्वर है तो हम उसकी पूजा क्यों न करे? सनातन पद्धति में माँ को ईश्वर के समकक्ष रखने के पीछे यह एक महत्वपूर्ण कारण है| तभी तो हम प्रकृति की पूजा करते हैं| हम माँ-बाप का सम्मान करते हैं, बड़े बुजुर्गों का आदर करते हैं यह हमारी उपासना ही तो है| हम मूर्ति पूजा करते हैं, हम पेड़ों की पूजा करते हैं, हम मिट्टी की पूजा करते हैं, हम खेतों की पूजा करते हैं, हम गायों की पूजा करते हैं, अन्य कई जीवों की पूजा करते हैं, हम नदियों, झरनों, पहाड़ों, फूलों की पूजा करते हैं, हम सूर्य की पूजा करते हैं, हम चन्द्रमा व तारों की पूजा करते हैं, हम आकाश व बादलों की पूजा करते हैं, हम ज्ञान व विद्या की पूजा करते हैं, हम धन की पूजा करते हैं, हम गाय के गोबर की भी पूजा करते है , हम जड़ीबूटियों की पूजा करते हैं, हम वायु की पूजा करते हैं, और भी बहुत उदाहरण हैं क्यों कि इन सबसे हमारी उत्पत्ति हुई है अत: हम इन सबकी पूजा करते हैं| सूफी काव्यों से नज़र डालते वक्त हमें यह बात ज़रूर समझ में आयेंगे .

।हमारी भावी पीढ़ियों को सुख-चैन व जीने का शाश्वत सुकून प्रदान कर सके इसी उम्मीद में सूफी कवियों ने रचनाएं की .। इस गौरवशाली परम्परा का आस्वादन करने वाले वंशज भी अपने पुरखों के त्याग व कर्मयोग का नित दिन स्मरण करते हुए प्रेरणा पाते रहते हैं। आदिकाल से चली आ रही इन सृजनधर्मी परम्पराओं के प्रवाह को अक्षुण्ण बनाये रखते हुए तीव्रतर व व्यापक स्वरूप देना मौजूदा पीढ़ी का फर्ज व धर्म दोनों ही है ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

आधार ग्रन्थ

१. जायसी कृत पद्मावत ,संपादक ,वासुदेव शरण अगरवाल ,लोकभारती प्रकाशन ,पहला संस्करण १९९६

२.कूटबन कृत मृगावती ,संपादक ,परमेश्वरी लाल गुप्त ,विश्व विद्यालयी प्रकाशन ,वाराणसी , पहला संस्करण ,१९६२

३. मुल्ला दाऊद कृत चंदायन ,संपादक परमेश्वरी लाल गुप्त ,हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर ,मुंबई , पहला संस्करण ,१९६४

४. उस्मान कृत चित्रावली ,संपादक जगन्मोहन वर्मा ,काशी १९९२

५. जायसी कृत कन्हावत,संपादक , परमेश्वरी लाल गुप्त ,अन्नपूर्ण प्रकाशन ,वाराणसी ,पहला संस्करण , १९८१

६. नूर मुहम्मद कृत ,इन्द्रावती ,संपादक श्यासुन्दर दास ,काशी , पहला संस्करण

७.अनुराग बांसुरी ,संपादक चन्द्रबली पाण्डेय ,पहला संस्करण,प्रयाग

८. कासिम्शाह कृत हंस जवाहिर ,लखनऊ ,१९३७

९.मंझन कृत मधुमालती ,संपादक शिवगोपाल मिश्र ,सोना प्रकाशन ,इलाहाबाद ,१९६१

सहायक ग्रन्थ सूची

१.डॉ .अवध बिहारी पाण्डेय ,पूर्व मद्ध्यस्कालीन भारत का इतिहास ,पहला संस्करण .१९७९

२. डॉ.असफ अली ,भक्तिकालीन हिदू संस्कृति पर मुस्लीम संस्कृति का प्रभाव ,एस आई .एस.प्रकाशन ,पहला संस्करण ,दिल्ली , १९७२

३.इन्दुबाली ,मद्ध्याकालीन हिंदी साहित्य,पुस्तक मंडल ,कानपुर,पहला संस्करण ,१९७६

४. उमा शंकर महेश ,भारतीय सभ्यता एवं संस्कृति ,विनोद पुस्तक मंदिर,मथुराआ, पहला संस्करण ,१९७७

५ .ऊर्मिला त्रिवेदी ,हिन्दू समाज ,श्वेत प्रकाशन ,गढ़वाल ,पहला संस्करण ,१९७९

६. डॉ.एस.पी .उइपाद्ध्याय. भारतीय पर्व और त्यौहार ,साहित्य प्रकाशन ,दिल्ली,पहला संस्करण ,१९७९

७. कन्हैया सिंह ,हिन्दी सूफी काव्य में हिन्दू संस्कृति का चित्रण और निरूपण ,भारतीय भण्डार ,प्रयाग ,पहला संस्करण ,१९६६

८. सूफी तत्वा चिंतन ,चित्रसेन पकाशन ,आजमगढ़ ,१९७१

९. देवी प्रसाद चात्तोपाद्ध्याय ,भारतीय दर्शन सामान्य परिचय ,राजकमल प्रकाशन ,दिल्ली, पहला संस्करण ,१९६५

१०.डॉ.जिया लाल हन्दू ,कश्मीरी और हिन्दी सूफी काव्यों का तुलनात्मक अद्ध्यायाँ ,भारतीय ग्रन्थ निकेतन ,दिल्ली, पहला संस्करण , १९७३

--